प्रकाशकका निवेदन

गांधी-साहित्यके पाठक गांधीजीकी 'पंचायत राज' नामक पुस्तिका देख चुके होंगे। अुनका संकलन श्री आ० के० प्रभुने किया था। 'पंचायत राज' के अपने निवेदनमें हमने कहा था कि श्री प्रभुने आजके दिलचस्प विषयों पर कुछ और पुस्तिकाओंकी सामग्री हमें संकलित करके दी है। सन्तति-नियमन पर प्रकाशित हो रही यह पुस्तिका अुनमें से अेक है। आगे कुछ और पुस्तिकायें भी प्रकाशित करनेकी हमारी योजना है।

सन्तति-नियमनके प्रश्न पर — जिसे आजकल 'कुटुम्ब-नियोजन' कहा जाता है — गांधीजीने बड़ी गहराअीसे विचार किया था और सारे प्रश्नकी बहुत बारीकीसे छानबीन की थी। अुन्होंने समय समय पर अिस विषय पर लिखा था। सारे लेख अेक पुस्तकके रूपमें अेकत्र किये गये थे। पुस्तकका नाम है 'सेल्फ-रेस्ट्रेन्ट वर्सस सेल्फ-अिण्डल्जेन्स'*। गांधीजीने आत्म-संयमकी आवश्यकताको स्वीकार किया था। लेकिन अुन्होंने हमें कड़ी चेतावनी दी थी कि कृत्रिम साधनों द्वारा सन्तति-नियमन किया जायगा, तो वह हमें नैतिक दिवालियेपनकी ओर तथा प्रजाके अधःपतनकी ओर ले जायगा। आज भारतमें केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारें भौतिक विज्ञान द्वारा सुझाये गये सारे अुपायोंकी मददसे देशमें सन्तानकी संख्या पर अंकुश लगानेकी अुतावलीमें पड़ी हुअी दिखाअी देती हैं। अैसे समय यह याद दिलाना अुचित होगा, और यह पुस्तिका सबको अच्छी तरह अिस बातकी याद दिलायेगी, कि अिस विषयमें भी वांछित ध्येयकी सिद्धिके लिअे साधनोंका शुद्ध होना बड़ा महत्त्व रखता है — शायद स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध जैसे महत्त्वपूर्ण विषयमें अैसा होना अधिक जरूरी है। 'सन्तति-नियमन' अिस विषय पर विभिन्न पहलुओंसे विचार करती है। आशा है कि आज जो महत्त्वपूर्ण प्रश्न हमें परेशान कर रहा है, अुसकी चर्चा करनेवाले अिस सामयिक प्रकाशनका पाठक स्वागत करेंगे।

६–४–'५९

---

* गुजरातीमें अिस विषय पर 'नीतिनाशने मार्गे' नामक पुस्तक प्रकाशित हुअी है। नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद–१४। कीमत ०.६२; डाकखर्च ०.२५।

अनुक्रमणिका

सन्तति-नियमन

सही मार्ग और गलत मार्ग

१

सन्तति-नियमन

निहायत झिझक और अनिच्छाके साथ मैं अिस विषयमें कुछ लिखनेके लिअे प्रवृत्त हुआ हूं। जबसे मैं भारतवर्षमें लौटा हूं तभीसे पत्रलेखक कृत्रिम साधनोंके द्वारा सन्ततिकी संख्या मर्यादित करनेके प्रश्न पर मुझे लिखते रहे हैं। मैं खानगी तौर पर ही अब तक अुनको जवाब देता रहा हूं। खुले तौर पर कभी मैंने अुसकी चर्चा नहीं की। आजसे कोअी चौंतीस साल पहले जब मैं अिंग्लैंडमें पढ़ता था तब अिस विषयकी ओर मेरा ध्यान गया था। अुस समय वहां अेक संयमवादी और अेक डॉक्टरके बीच बड़ा वाद-विवाद चल रहा था। संयमवादी कुदरती साधनोंके सिवा किन्हीं दूसरे साधनोंको माननेके लिअे तैयार न था और डॉक्टर कृत्रिम साधनोंका हामी था। अुसी समयसे मैं कुछ समय तक कृत्रिम साधनोंकी ओर झुक कर फिर अुनका पक्का विरोधी हो गया। अब मैं देखता हूं कि कुछ हिन्दी पत्रोंमें कृत्रिम साधनोंका वर्णन बड़े बगावती ढंगसे और खुले तौर पर किया गया है, जिसे देखकर सुरुचिको बड़ा आघात पहुंचता है। और मैं देखता हूं कि अेक लेखकने तो मेरा भी नाम बेखटके सन्तति-नियमनके लिअे कृत्रिम साधनोंका अुपयोग करनेके हामियोंमें लिख मारा है। मुझे अेक भी अैसा मौका याद नहीं पड़ता जब मैंने कृत्रिम साधनोंके अुपयोगके पक्षमें कोअी बात कही या लिखी हो। मैं देखता हूं कि दो और प्रसिद्ध पुरुषोंके नाम अिसके समर्थकोंमें दिये गये हैं। अुनके मालिकोंसे पूछताछ किये बिना मुझे अुनका नाम प्रकट करनेमें संकोच होता है।

सन्ततिके जन्मको मर्यादित करनेकी आवश्यकताके बारेमें दो मत हो ही नहीं सकते। परन्तु अिसका अेक ही अुपाय है आत्म-संयम या ब्रह्मचर्य, जो कि युगोंसे हमें प्राप्त है। यह रामबाण और सर्वोपरि अुपाय

है और जो अुसका सेवन करते हैं अुन्हें लाभ ही लाभ होता है। डॉक्टर लोगोंका मानव-जाति पर बड़ा अुपकार होगा, यदि वे सन्तति-नियमनके लिअे कृत्रिम साधनोंकी तजवीज करनेकी जगह आत्म-संयमके साधन निर्माण करें। स्त्री-पुरुषके मिलापका हेतु आनन्द-भोग नहीं, बल्कि सन्तानोत्पत्ति है। और जब सन्तानोत्पत्तिकी अिच्छा नहीं हो तब संभोग करना बिलकुल अपराध है, गुनाह है।

कृत्रिम साधनोंकी सलाह देना मानो बुराअीका हौसला बढ़ाना है। अुससे पुरुष और स्त्री अुच्छृंखल हो जाते हैं। और अिन कृत्रिम साधनोंको जो प्रतिष्ठा दी जा रही है, अुससे तो अुस संयमके ह्रासकी गति बढ़े बिना न रहेगी, जो कि लोकमतके कारण हम पर रहता है। कृत्रिम साधनोंके अवलंबनका कुफल होगा नपुंसकता और क्षीणवीर्यता। यह दवा मर्जसे भी ज्यादा बदतर साबित हुअे बिना न रहेगी।

अपने कर्मके फलको भोगनेसे दुम दबाना दोष है, अनीतिपूर्ण है। जो शख्स जरूरतसे ज्यादा खा लेता है, अुसके लिअे यह अच्छा है कि अुसके पेटमें दर्द हो और अुसे लंघन करना पड़े। जबानको काबूमें न रख कर अनाप-शनाप खा लेना और फिर बलवर्द्धक या दूसरी दवाअियां खाकर अुसके नतीजेसे बचना बुरा है। पशुकी तरह विषय-भोगमें गर्क रहकर फिर अपने अिस कृत्यके फलसे बचना और भी बुरा है। प्रकृति बड़ी कठोर शासक है। वह अपने कानून-भंगका पूरा बदला बिना आगा-पीछा देखे चुकाती है। केवल नैतिक संयमके द्वारा ही हमें नैतिक फल मिल सकता है। दूसरे तमाम प्रकारके संयम-साधन अपने तुके ही विनाशक सिद्ध होंगे। कृत्रिम साधनोंके समर्थनके मूलमें यह युक्ति या धारणा रहती है कि भोग-विलास जीवनकी अेक आवश्यक चीज है। अिससे बढ़कर हेत्वाभास — गलत तर्क हो ही नहीं सकता। अतअेव जो लोग सन्तति-नियमनके लिअे अुत्सुक हैं, अुन्हें चाहिये कि वे प्राचीन लोगोंके बताये जायज अुपायोंकी ही खोज करें, और अिस बातका पता लगानेकी कोशिश करें कि अुन्हें पुनर्जीवन किस तरह दिया जाय। अुनके सामने बुनियादी कामका

पहाड़ खड़ा हुआ है। बाल-विवाह जनसंख्याकी वृद्धिका अेक बड़ा सफल कारण है। हमारी वर्तमान जीवन-पद्धति भी बेरोक प्रजोत्पत्तिके दोषका बड़ा कारण है। यदि अिन कारणोंकी छानबीन करके अुनको दूर करनेका अुपाय किया जाय, तो नैतिक दृष्टिसे समाज बहुत अूंचा अुठ जायगा। यदि हमारे अिन जल्दबाज और अति-अुत्साही लोगोंने अुनकी ओर ध्यान न दिया और यदि कृत्रिम साधनोंका ही दौरदौरा चारों ओर हो गया, तो सिवा नैतिक अधःपतनके दूसरा कोअी नतीजा न निकलेगा।

जो समाज पहले ही विविध कारणोंसे निःसत्त्व हो रहा है, वह अिन कृत्रिम साधनोंके प्रयोगसे और भी अधिक निःसत्त्व हो जायगा। अिसलिअे वे लोग जो कि हलके दिलसे कृत्रिम साधनोंका प्रचार करते हैं, नये सिरेसे अिस विषयका अध्ययन-मनन करें, अपनी हानिकर कार्रवाअियोंसे बाज आवें और क्या विवाहित और क्या अविवाहित दोनोंमें ब्रह्मचर्यकी निष्ठा जाग्रत करें। सन्तति-नियमनका यही अुच्च और सीधा तरीका है।

हिन्दी नवजीवन, १२–३–'२५

२

कृत्रिम साधनोंका अुपयोग

विषय-भोग करते हुअे भी कृत्रिम अुपायोंके द्वारा प्रजोत्पत्ति रोकनेकी प्रथा पुरानी है। मगर पूर्वकालमें वह गुप्त रूपसे चलती थी। आधुनिक सभ्यताके अिस जमानेमें अुसे अूंचा स्थान मिल गया है, और कृत्रिम अुपायोंकी रचना भी व्यवस्थित तरीकेसे की गयी है। अिस प्रथाको परमार्थका जामा पहनाया गया है। अिन अुपायोंके हिमायती कहते हैं कि भोगेच्छा स्वाभाविक वस्तु है, शायद अुसे अीश्वरका वरदान भी कहा जा सकता है। अुसे निकाल फेंकना अशक्य है। अुस पर संयमका अंकुश रखना कठिन है। और अगर संयमके सिवा दूसरा कोअी अुपाय न ढूंढ़ा जाय, तो

असंख्य स्त्रियोंके लिअे प्रजोत्पत्ति बोझरूप हो जायगी, और भोगसे अुत्पन्न होनेवाली प्रजा अितनी बढ़ जायगी कि मनुष्य-जातिके लिअे पूरी खुराक ही नहीं मिल सकेगी। अिन दो आपत्तियोंको रोकनेके लिअे कृत्रिम अुपायोंकी योजना करना मनुष्यका धर्म हो जाता है।

मुझ पर अिस दलीलका असर नहीं हुआ है। क्योंकि अिन अुपायोंके द्वारा मनुष्य अनेक दूसरी मुसीबतें मोल लेता है। मगर सबसे बड़ा नुकसान तो यह है कि कृत्रिम अुपायोंके प्रचारसे संयम-धर्मके लोप हो जानेका भय पैदा होगा। अिस रत्नको बेचकर चाहे जैसा तात्कालिक लाभ मिले, तो भी यह सौदा करने योग्य नहीं है। . . . ब्रह्मचर्यका पालन करनेकी अिच्छावाले लोग भूलकर भी कृत्रिम अुपायोंके नजदीक न फटकें। वे विषय-भोगका त्याग करनेका भगीरथ प्रयत्न करें और निर्दोष आनन्दके अनेक क्षेत्रोंमें से थोड़े पसन्द कर लें। अैसी प्रवृत्तियां ढूंढ़ लें जिनसे सच्चा दंपती-प्रेम शुद्ध मार्ग पर जाय, दोनोंकी अुन्नति हो और विषय-वासनाके सेवनका अवकाश ही न मिले। शुद्ध त्यागका थोड़ा अभ्यास करनेके बाद, अिस त्यागके अन्दर जो रस भरा पड़ा है, वह अुन्हें विषय-भोगकी ओर जाने ही नहीं देगा। कठिनाअी आत्म-वंचनासे पैदा होती है। अिसमें त्यागका आरम्भ विचार-शुद्धिसे नहीं होता, केवल बाह्याचारको रोकनेके निष्फल प्रयत्नसे होता है। विचारकी दृढ़ताके साथ आचारका संयम शुरू हो, तो सफलता मिले बिना रह ही नहीं सकती। स्त्री-पुरुषकी जोड़ी विषय-सेवनके लिअे हरगिज नहीं बनी है।

आरोग्यकी कुंजी, पृ० ३७–३८, १९५९

रतिसुख अेक स्वतंत्र वस्तु है, अिस धारणामें मुझे तो घोर अज्ञान ही दिखाअी पड़ता है। जनन-क्रिया पर संसारके अस्तित्वका आधार है। संसार अीश्वरकी लीलाभूमि है, अुसकी महिमाका प्रतिबिम्ब है। अुसकी सुव्यवस्थित वृद्धिके लिअे ही रतिक्रियाका निर्माण हुआ है, अिस बातको समझनेवाला मनुष्य विषय-वासनाको महाप्रयत्न करके भी अंकुशमें रखेगा, और रतिसुखके परिणाम-स्वरूप होनेवाली संततिकी शारीरिक, मानसिक

और आध्यात्मिक रक्षाके लिअे जिस ज्ञानकी प्राप्ति आवश्यक हो अुसे प्राप्त करके अुसका लाभ अपनी सन्तानको देगा।

आत्मकथा, पृ० १७५-७६, १९५८

३

अिन्द्रिय-संयमकी आवश्यकता

आरोग्यकी अनेक कुंजियां हैं और वे सब बिलकुल जरूरी हैं; परन्तु अुन सबमें अूंची आवश्यक कुंजी तो ब्रह्मचर्य है। शुद्ध हवा, शुद्ध पानी और पोषक खुराक निश्चित रूपसे आरोग्यको बढ़ानेवाली चीजें हैं। परन्तु जो आरोग्य हम प्राप्त करें अुसे पूरा पूरा खर्च कर डालें, तो हम तन्दुरुस्त कैसे रह सकते हैं? जो पैसा हम कमायें वह साराका सारा खर्च कर डालें, तो हम जरूर कंगाल और गरीब बन जायंगे। अिसमें कोअी शंका हो ही नहीं सकती कि पुरुष और स्त्रियां जब तक सच्चे ब्रह्मचर्यका पालन नहीं करते, तब तक वे वीर्यवान अथवा सशक्त नहीं हो सकते।

हम शायद ही अिस सत्यको महसूस करते हैं कि अिन्द्रिय-संयमका अभाव दुनियामें अधिकतर अभिमान, क्रोध, डर और अीर्ष्याका मूल कारण होता है। अगर हमारा मन हमारे वशमें नहीं हो, अगर हम प्रतिदिन अेक बार या बार-बार छोटे बालकोंसे भी अधिक नादानीका व्यवहार करें, तो हम जाने या अनजाने कौनसे पाप नहीं कर डालेंगे? हम अपने कामोंके परिणामों पर विचार करनेके लिअे कैसे रुक सकते हैं, भले वे कितने ही नीच या पापपूर्ण क्यों न हों?

परन्तु आप पूछ सकते हैं: 'अिस अर्थमें सच्चा ब्रह्मचारी किसीने कब देखा है? अगर सारे पुरुष ब्रह्मचारी बन जायं तो मानव-जातिका अन्त नहीं हो जायगा और सारी दुनिया नष्ट-भ्रष्ट नहीं हो जायगी?'

हम अिन प्रश्नोंके धार्मिक पहलूको छोड़ दें और केवल लौकिक दृष्टिकोणसे ही अिनकी चर्चा करें। मेरे विचारसे ये प्रश्न केवल हमारी कायरता और पामरताको ही बताते हैं। हममें ब्रह्मचर्यका पालन करनेके लिअे संकल्प-बल नहीं है, और अिसलिअे हम अपने कर्तव्यको टालनेके बहाने ढूंढ़ते फिरते हैं। सच्चे ब्रह्मचारियोंकी जातिका अन्त नहीं हो गया है; लेकिन अगर वे सामान्यतः हर जगह मिल जायें तो ब्रह्मचर्यकी क्या कीमत रह जाय? कड़ी मेहनत-मशक्कत करनेवाले हजारों मजदूरोंको हीरोंकी खोजके लिअे पृथ्वीके गर्भमें गहरी खुदाअी करनी पड़ती है, और अिस जी-तोड़ मेहनतके अन्तमें अुन्हें चट्टानोंके बड़े-बड़े ढेरोंमें से केवल मुट्ठीभर हीरे प्राप्त होते हैं। तब ब्रह्मचारीके रूपमें अनन्त गुने बहुमूल्य हीरेकी खोजके लिअे अिससे कितने अधिक परिश्रमकी आवश्यकता होनी चाहिये? अगर ब्रह्मचर्यके पालनका अर्थ दुनियाका अन्त हो, तो हमें अुसकी चिन्ता नहीं होनी चाहिये। क्या हम परमेश्वर हैं, जो दुनियाके भविष्यके बारेमें अितने चिन्तित हों? जिसने अिस दुनियाको पैदा किया है, वह निश्चित ही अिसकी रक्षाकी चिन्ता करेगा। हमें यह पूछनेकी तकलीफमें नहीं पड़ना चाहिये कि दूसरे लोग ब्रह्मचर्यका पालन करते हैं या नहीं। जब हम किसी व्यापार या धन्धेमें प्रवेश करते हैं, तब क्या हम अिसका विचार करनेके लिअे ठहरते हैं कि अगर सभी लोग अैसा करें तो दुनियाका भविष्य क्या होगा? सच्चा ब्रह्मचारी अन्तमें अैसे प्रश्नोंके अुत्तर अपने लिअे स्वयं खोज निकालेगा।

परन्तु अिस भौतिक जगतकी चिन्ताओंमें फंसे हुअे आदमी अिन विचारों पर अमल कैसे कर सकते हैं? जो लोग विवाहित हैं वे क्या करें? जिनके बच्चे हैं वे क्या करें? और वे लोग क्या करें, जो अपने-आप पर संयम नहीं रख सकते? हम यह देख चुके हैं कि हमारे लिअे प्राप्त करनेकी सर्वोच्च स्थिति क्या है। हमें अिस आदर्शको सदा अपने सामने रखना चाहिये और यथाशक्ति अुस आदर्श तक पहुंचनेका प्रयत्न करना चाहिये। जब छोटे बालकोंको वर्णमालाके अक्षर लिखना सिखाया

जाता है, तब हम अुन्हें अक्षरोंकी पूर्ण आकृतियां सिखाते हैं और बालक यथाशक्ति अुनकी नकल करनेका प्रयत्न करते हैं। अुसी तरह अगर हम दृढ़तासे ब्रह्मचर्यके आदर्श तक पहुंचनेका प्रयत्न करेंगे, तो संभव है अन्तमें हम अुसे प्राप्त करनेमें सफल हो जायंगे। हम विवाह कर चुके हों तब क्या करें? कुदरतका यह नियम है कि पति और पत्नी तभी ब्रह्मचर्यको तोड़ें जब वे सन्तानकी अभिलाषा अनुभव करें। जो पति-पत्नी अिस कानूनको याद रख कर चार या पांच वर्षमें अेक बार ब्रह्मचर्यका भंग करेंगे, वे काम-वासनाके गुलाम नहीं बनेंगे और न अपनी बहुमूल्य शक्तिके संग्रहमें से अधिक शक्ति खोयेंगे। परन्तु बड़े दुःखके साथ कहना पड़ता है कि अैसे स्त्री-पुरुष विरले ही होते हैं, जो केवल सन्तानके लिये ही काम-विकारके सामने झुकते हैं। स्त्री-पुरुषोंका बहुत बड़ा भाग तो केवल अपनी विषय-वासनाकी तृप्तिके लिये ही संभोगकी ओर मुड़ता है। अिसका परिणाम यह होता है कि अुनकी अिच्छाके बिलकुल विरुद्ध अुनके सन्तान पैदा होती है। संभोगकी वासनाको तृप्त करनेके पागलपनमें वे अपने कार्यके परिणामोंका विचार नहीं करते। अिस मामलेमें स्त्रियोंके बनिस्बत पुरुष अधिक दोषी होते हैं। पुरुष अपनी काम-वासनासे अितना अंधा हो जाता है कि वह अिस बातको याद करनेकी कभी तकलीफ ही नहीं अुठाता कि अुसकी पत्नी कमजोर है और वह सन्तान अुत्पन्न करनेका या अुसका पालन-पोषण करनेका कष्ट नहीं सह सकती। बेशक, पश्चिममें तो लोग सारी मर्यादाओंको पार कर गये हैं। वे संभोग-सुखमें रत रहते हैं और माता-पिता बननेकी जिम्मेदारियोंको टालनेके लिये अनेक अुपाय निकालते हैं।

सेल्फ-रेस्ट्रेन्ट वर्सस सेल्फ-अिण्डल्जेन्स, पृ० ५१–५३, १९५८

४

जीवनका कानून

पहले ही मैं यह वात साफ किये देता हूं कि मैंने यह लेख न तो संन्यासियोंके लिअे और न अेक संन्यासीकी हैसियतसे लिखा है। मैं प्रचलित अर्थके अनुसार संन्यासी होनेका दावा भी नहीं करता। मैंने जो कुछ लिखा है अपने आज तकके अखंडित निजी अभ्यासके वल पर लिखा है, जिसमें २५ सालके वीच कहीं कहीं नियम-भंग हुआ है। यही नहीं, मेरे अुन मित्रोंका अनुभव भी अिसमें शामिल है जिन्होंने अिस प्रयोगमें वरसों मेरा साथ दिया है, जिसकी वदौलत कुछ परिणाम निश्चित किये जा सकते हैं। अिस प्रयोगमें क्या युवक और क्या वूढ़े, दोनों प्रकारके स्त्री-पुरुष सम्मिलित हैं। मेरा दावा है कि यह प्रयोग कुछ अंश तक तो वैज्ञानिक दृष्टिसे भी शुद्ध था। यद्यपि अुसका आधार विलकुल नैतिक था, तथापि अुसका जन्म सन्तति-नियमनकी अभिलाषासे हुआ था। मेरा प्रयोग तो खास अिसी प्रयोजनके लिअे था। अुसके पश्चात् विचार करने पर अुससे भारी नैतिक परिणाम निकले — पर निकले वे विलकुल स्वाभाविक क्रमसे। मैं यह दावा करता हूं कि यदि विचार और विवेकसे काम लिया जाय, तो विना ज्यादा कठिनाअीके संयमका पालन करना विलकुल संभव है। और यह मेरा अकेलेका ही दावा नहीं है, वल्कि जर्मन तथा दूसरे प्राकृतिक चिकित्सकोंका भी है। अुनका तो कहना है कि जल तथा मिट्टीके प्रयोगसे स्नायु संकुचित होते हैं और सादे तथा विशेषकर फल-भोजनसे स्नायुओंका वेग शांत होता है; अिनके वल पर विषय-विकारको मनुष्य आसानीसे जीत सकता है, साथ ही अुससे स्नायु पुष्ट और वलवान भी होते हैं। राजयोगियोंका कहना है कि अुच्चतर अभ्यासोंका सहारा लिये विना केवल यथाविधि प्राणायाम करनेसे भी यही लाभ होता है। पश्चिमी और पूर्वी प्राचीन विधियां

अकेले संन्यासियोंके लिअे ही नहीं हैं, बल्कि अिसके विपरीत मानकर गृहस्थोंके लिअे हैं। यदि यह कहा जाय कि जनसंख्याकी अतिवृद्धिके कारण कृत्रिम साधनोंके द्वारा सन्तति-नियमनकी राष्ट्रके लिअे आवश्यकता है, तो मुझे अिस बातमें पूरा शक है। यह बात अब तक साबित ही नहीं की गअी है। मेरी रायमें तो यदि जमीन-सम्बंधी कानूनोंमें समुचित सुधार कर दिया जाय, कृषिकी दशा सुधारी जाय और अेक सहायक धन्धेकी तजवीज कर दी जाय, तो हमारा यह देश अपनी जनसंख्यासे दूने लोगोंका भरण-पोषण कर सकता है। मैंने तो देशकी मौजूदा राजनीतिक अवस्थाकी दृष्टिसे ही सन्तति-नियमन चाहनेवालोंका साथ दिया है।

मैं यह बात जरूर कहता हूं कि मनुष्यकी सन्तानोत्पत्तिकी अभिलाषा पूरी हो जाने पर अुसका काम-विकार अवश्य शांत होना चाहिये। आत्म-संयमके अुपाय लोकप्रिय और फलदायी बनाये जा सकते हैं। शिक्षित लोगोंने कभी अुसकी आजमाअिश ही नहीं की। संयुक्त कुटुम्ब-प्रथाको धन्यवाद है कि अुसकी बदौलत अभी शिक्षित लोगोंको अुनका भार मालूम नहीं हुआ है। जिन्होंने मालूम किया है अुन्होंने अुसके अन्तर्गत नैतिक सवालों पर विचार नहीं किया है। ब्रह्मचर्य पर कुछ यहां-वहां दिये जानेवाले व्याख्यानोंके अलावा संतानोत्पत्तिको मर्यादित करनेके अुद्देश्यसे आत्म-संयमके प्रचारके लिअे कोअी भी व्यवस्थित प्रयत्न नहीं किया गया है। बल्कि अुनके विपरीत यह अन्धविश्वास कि बृहत् कुटुम्बका होना अेक शुभ लक्षण है, और अिसलिअे वह वांछनीय है, अब भी प्रचलित है। धर्मोपदेशक आम तौर पर यह अुपदेश नहीं देते कि प्रसंग अुपस्थित होने पर संतानोत्पत्तिको सीमित करना भी अुतना ही बड़ा धार्मिक कर्तव्य है जितना कि प्रसंग-विशेष पर संतान-वृद्धि करना हो सकता है।

मुझे भय है कि कृत्रिम साधनोंके हिमायती लोग अिस बातको गृहीत मानकर चलते हैं कि विषय-विकारकी तृप्ति जीवनके लिअे अेक आवश्यक और अिसलिअे अपने आपमें वांछनीय वस्तु है। अबला-जातिके लिअे जो चिन्ता प्रदर्शित की गअी है, वह तो अत्यन्त करुणाजनक है।

मेरी रायमें तो कृत्रिम साधनोंके द्वारा सन्तति-नियमनकी पुष्टिके लिअे नारी जातिको सामने खड़ा करना अुसका अपमान करना है। अेक तो यों ही मनुष्यने अपनी विषय-तृप्तिके लिअे अुनका काफी अधःपतन कर डाला है और अब ये कृत्रिम साधन, अुनके हिमायतियोंके सदुद्देश्यके रहते हुअे भी, अुन्हें और गिराये विना न रहेंगे। हां, मैं जानता हूं कि आजकल अैसी स्त्रियां भी हैं जो खुद ही अिन साधनोंकी हिमायत करती हैं। पर मुझे अिस बातमें कोअी शक नहीं कि स्त्रियोंकी अेक बहुत बड़ी तादाद अिन साधनोंको अपने गौरवके खिलाफ समझ कर अुनका निरादर करेगी। यदि पुरुष सचमुच स्त्री-जातिका हित चाहता है, तो अुसे चाहिये कि वह खुद ही अपने मनको वशमें रखे। स्त्रियां पुरुषोंको नहीं ललचातीं। सच पूछिये तो पुरुष ही खुद ज्यादती करता है और अिसलिअे वही सच्चा अपराधी और ललचानेवाला है।

मैं कृत्रिम साधनोंके हामियोंसे आग्रह करता हूं कि वे अिसके नतीजों पर गौर करें। अिन साधनोंके ज्यादा अुपयोगका फल होगा विवाह-बन्धनका नाश और मनमाने प्रेम-सम्बन्धकी बढ़ती। यदि मनुष्यके लिअे विषय-विकारकी तृप्ति आवश्यक ही हो जाय, तो फिर फर्ज कीजिये यदि वह बहुत काल तक अपने घरसे दूर रहे, या दीर्घ काल तक युद्धमें लगा रहे, या विधुर हो जाये, या अुसकी पत्नी अैसी बीमार हो जाये कि कृत्रिम साधनोंका प्रयोग करते हुअे भी अुसकी विषय-तृप्तिके अयोग्य हो, तो अैसी अवस्थामें अुसे क्या करना होगा?

* * *

भारतवर्षमें अेक तो यों ही विवाहित लोगोंकी संख्या बहुत है। फिर वह निःसत्त्व भी काफी हो चुका है। यदि और किसी कारणसे नहीं तो अुसकी खोअी हुअी जीवन-शक्तिको वापिस लानेके लिअे ही अुसे कृत्रिम साधनोंके द्वारा विषय-भोगकी नहीं, बल्कि पूर्ण संयमकी शिक्षाकी जरूरत है। हमारे अखबारोंको देखिये। किस तरह दवाअियोंके अनीति-मूलक विज्ञापन अुन्हें कुरूप बना रहे हैं! कृत्रिम साधनोंके हिमायती

अुन्हें अपने लिअे चेतावनी समझें। कोअी लज्जा या झूठे संकोचका भाव मुझे अिनकी चर्चासे नहीं रोक रहा है; बल्कि यह ज्ञान मुझसे संयम करा रहा है कि अिस देशके जीवन-शक्तिसे हीन और निर्बल युवक विषय-भोगके पक्षमें पेश की गअी सदोष युक्तियोंके शिकार बड़ी आसानीसे हो जाते हैं।

हिन्दी नवजीवन, १-४-'२५

५

सही मार्ग

प्रजोत्पत्तिको रोका कैसे जाय? यूरोपकी तरह अनीतिमय और कृत्रिम अुपायों द्वारा नहीं, परन्तु आत्म-संयम द्वारा, यम-नियमके जीवन द्वारा। माता-पिताको अपने बालकोंको ब्रह्मचर्य-पालनके पाठ सिखाने चाहिये।

यहां मैं पाठकोंके लिअे कुछ नियम देता हूं। ये नियम मेरे अकेलेके ही अनुभवके आधार पर नहीं, परन्तु मेरे अनेक साथियोंके अनुभवके आधार पर बनाये हुअे हैं:

१. लड़कों और लड़कियोंका सादी और कुदरती पद्धतिसे अिस मान्यताके आधार पर पालन-पोषण किया जाय कि वे जीवनभर पवित्र और निर्मल रहनेवाले हैं।

२. सबको मसालोंका, मिर्चका और गरम पाकोंका त्याग करना चाहिये। चरबीवाली और पचनेमें भारी खुराक, मिष्टान्न, मिठाअी और तले हुअे पदार्थ खाना छोड़ देना चाहिये।

३. पति-पत्नीको अलग कमरोंमें सोना चाहिये और अेकान्तको टालना चाहिये।

४. शरीर और मन दोनोंको सतत अच्छे कार्योंमें लगाये रखना चाहिये।

५. रातमें जल्दी सोने और सवेरे जल्दी अुठनेके नियमका सख्तीसे पालन करना चाहिये।

६. किसी भी प्रकारका वीभत्स और अश्लील साहित्य नहीं पढ़ना चाहिये। मलिन विचारोंकी दवा पवित्र और निर्मल विचार ही हैं।

७. नाटक, सिनेमा या मनोविकारोंको अुत्तेजित करनेवाले अैसे दूसरे तमाशे नहीं देखने चाहिये।

८. स्वप्नदोप हो जाय तो घवराना नहीं चाहिये। अैसे समय तन्दुरुस्त आदमीको ठंडे पानीसे नहा लेना चाहिये। यह अुत्तम अिलाज है। यह मान्यता गलत है कि स्वप्नदोपका अिलाज करनेके लिअे कभी कभी स्त्रीसंग किया जा सकता है।

९. सवसे महत्त्वकी वात यह है कि किसी भी व्यक्तिको — पति-पत्नीको भी — अैसा नहीं मानना चाहिये कि संयमका पालन अत्यन्त कठिन है। अिसके विपरीत, सव कोअी संयमको जीवनकी सामान्य और स्वाभाविक स्थिति मानकर चलें।

१०. प्रतिदिन सवेरे अुठकर पवित्रता और निर्मलताके लिअे अेकाग्र मनसे प्रभुकी प्रार्थना करनी चाहिये। अिससे हम प्रतिदिन अधिकाधिक पवित्र और निर्मल वनेंगे।

नीतिनाशके मार्ग पर (गुजराती), पृ० ३५, ३७–३८, १९५०

६

ब्रह्मचर्यकी तीन सीढ़ियां

प्रजोत्पत्ति स्वाभाविक क्रिया तो जरूर है, लेकिन अुसकी मर्यादायें स्पष्ट हैं। अिन मर्यादाओंका पालन नहीं होता, अिस कारणसे स्त्री-जाति भयभीत रहती है और सन्तान नामर्द बनती है। अिससे रोग बढ़ते हैं, पाखंड फैलता है और जगत ओीश्वर-रहित जैसा बन जाता है। मनुष्य जब विषय-भोगमें लिपट जाता है, तब वह अपना भान खो देता है। अैसी बेभान और मूर्च्छित अवस्थामें रहनेवाला मनुष्य कुछ लिखे, अुसे प्रकाशित करे और हम अुससे मोहित होकर अुसका अनुकरण करने लगें, तो हमारी क्या दशा होगी? परन्तु आजके पाठक-समाजमें व्यवहार तो अैसा ही चलता दिखाओी देता है। पतंगा जब दीपकके आसपास चक्कर काट रहा हो, अुस समयके अपने क्षणिक सुख और आनन्दका वर्णन वह लिखे और हम अुसे ज्ञानी समझकर अुसका वर्णन पढ़ें तथा अुसका अनुकरण करें, तो हमारी क्या हालत हो? मैं तो अपने अनुभव और अपने साथियोंके अनुभवके आधार पर यहां तक कहना चाहता हूं कि पति-पत्नीके बीच भी व्यभिचारपूर्ण आकर्षण स्वाभाविक नहीं है। विवाहका अर्थ यह है कि दोनों पति-पत्नी अपने प्रेमको निर्मल और शुद्ध बनावें और ओीश्वर-प्रेमका अनुभव करें। पति-पत्नीके बीच निर्विकार, शुद्ध प्रेमका होना असंभव नहीं है। मनुष्य पशु नहीं है। अनेक पशुजन्मोंके बाद वह मनुष्य बना है। वह सीधा खड़ा रहनेको पैदा हुआ है। पशुओंकी तरह चार पांव पर चलने या कीड़ेकी तरह रेंगनेको पैदा नहीं हुआ है। पशुता और पुरुषार्थमें अुतना ही भेद है, जितना जड़ और चेतनके बीच है।

यहां मैं ब्रह्मचर्यकी सिद्धिके कुछ अुपाय संक्षेपमें बताता हूं।

ब्रह्मचर्य तक पहुंचनेकी पहली सीढ़ी है अुसकी आवश्यकताका भान होना। अिसके लिअे ब्रह्मचर्य-सम्वन्धी पुस्तकोंका पठन और मनन आवश्यक है।

दूसरी सीढ़ी है धीरे धीरे अिन्द्रिय-निग्रह करना, अिन्द्रियों पर कावू पाना। ब्रह्मचारी स्वाद पर अंकुश रखे; जो कुछ वह खाये पोषणके लिअे ही खाये। आंखोंसे गन्दी वस्तु न देखे। आंखोंसे सदा शुद्ध वस्तु ही देखे। किसी गंदी वस्तुके सामने आंखें वन्द कर ले। अिसीलिअे सभ्य स्त्री-पुरुष चलते-फिरते अिधर-अुधर देखनेके वदले जमीन पर ही नजर रखें और शरीरकी तुच्छताका ही दर्शन करें। वे कानसे कोअी वीभत्स वात कभी न सुनें; नाकसे विकार अुत्पन्न करनेवाली वस्तुअें न सूंघें। स्वच्छ मिट्टीमें जो सुगन्ध है, वह गुलावके अित्रमें नहीं है। जिसे आदत नहीं होती वह तो अिन वनावटी सुगन्धोंसे अकुला अुठता है। अपने हाथ-पांवका वे कभी वुरे काममें अुपयोग न करें; और समय-समय पर अुपवास करें।

तीसरी सीढ़ी यह है कि ब्रह्मचारी अपना सारा समय सत्कार्यमें, जगतकी सेवामें ही विताये।

अंतिम वस्तु यह है कि वह सत्संगका सेवन करे, अच्छी पुस्तकें पढ़े और आत्म-दर्शनके विना विकार जड़मूलसे नष्ट नहीं हो सकते अैसा समझ कर रामनामका सदा रटन करे और अीश्वर-प्रसादकी याचना करे।

अिन सवमें अेक भी वात अैसी नहीं है, जिस पर सामान्यसे सामान्य स्त्री-पुरुष भी अमल न कर सकें। परन्तु अिनकी यह सरलता ही अेक वड़े पहाड़के समान मालूम होती है। ब्रह्मचर्यकी आवश्यकताके वारेमें पूरी श्रद्धा न होनेसे मनुष्य व्यर्थ प्रयत्न किया करता है। अिसमें शंका नहीं कि जिसके मनमें ब्रह्मचर्यकी अिच्छा पैदा हो गअी है, अुसके लिअे ब्रह्मचर्यका पालन साध्य हो जाता है। जगत ब्रह्मचर्यके कम या अधिक पालनसे ही निभता है, यह बताता है कि ब्रह्मचर्य आवश्यक है और अुसका पालन करना संभव है।

नीतिनाशके मार्ग पर (गुजराती), पृ० ५७–५९, १९५०

ब्रह्मचर्यकी सिद्धि असंभव नहीं

कृत्रिम अुपायों द्वारा किया जानेवाला संतति-नियमन अेक हद तक नयी प्रजाकी संख्याको अवश्य रोकता है और अुनका अुपयोग करके सामान्य स्थितिके आदमीकी भुखमरीकी हालत टाली जा सकती है। लेकिन अुनसे व्यक्ति और समाजको जो नैतिक हानि होती है वह अपार है। अेक तो जो लोग विषय-वासनाकी तृप्तिके लिअे ही विषय-सेवन करते हैं, जीवनके प्रति अुनकी दृष्टिमें आमूल परिवर्तन हो जाता है। फिर अुनके लिअे विवाहमें पवित्रताका भाव नहीं रह जाता। अिसका यह अर्थ हुआ कि जिन सामाजिक आदर्शोंकी आज तक अेक अतिशय मूल्यवान निधिके रूपमें कीमत की जाती रही है, अुनका मूल्य घट जाता है। बेशक, यह दलील अुन लोगोंके मन पर तो शायद ही कोअी असर करेगी, जो विवाहके पुराने आदर्शोंको अन्धविश्वाससे अधिक कुछ नहीं मानते। मेरी दलील अुनके लिअे नहीं है; वह तो अुन्हीं लोगोंके लिअे है जो विवाहको अेक पवित्र संस्कार मानते हैं और स्त्रीको पशु-सुलभ विषय-वासनाकी तृप्तिका साधन नहीं, बल्कि मनुष्यकी माता और अपनी संततिके शील और सदा-चारकी धात्री मानते हैं।

संयम-पालनका मेरा और मेरे साथियोंका अनुभव, मैंने यहां जो विचार पेश किया है, अुसमें मेरे विश्वासको दृढ़ करता है। विवाहकी प्राचीन कल्पनाका अर्थ मैं नये प्रकाशमें देख सका हूं और अुससे मेरे अिस विचारको बहुत बल मिला है। अब मुझे अिस बातकी पूरी प्रतीति हो गयी है कि विवाहित जीवनमें ब्रह्मचर्यका स्वाभाविक और अनिवार्य स्थान है। वह अुतनी ही सीधी और सरल वस्तु है जितनी कि विवाह खुद। संतति-नियमनकी कोअी दूसरी पद्धति मुझे व्यर्थ और अकल्पनीय मालूम होती है। जननेन्द्रियका अेकमात्र और अुदात्त कार्य प्रजोत्पादन है, यह सत्य जहां अेक बार स्त्री या पुरुषके मनमें अुतरा कि वे किसी भिन्न अुद्देश्यके लिअे किये गये संभोगको वीर्यशक्तिका दण्डनीय दुर्व्यय

मानेंगे और अिस सिलसिलेमें स्त्री और पुरुष दोनोंकी विकार-भावनाओंका जो अुद्दीपन होता है, अुसे भी अपनी अिस बहुमूल्य शक्तिका अुतना ही बड़ा दुर्व्यय मानेंगे। अब यह सहज ही समझमें आयेगा कि प्राचीन वैज्ञानिकोंने वीर्यकी रक्षाको अितना महत्त्व क्यों दिया है और समाजके कल्याणके लिअे हमें अिसका अुच्चतम शक्तिमें रूपान्तर करना चाहिये, अैसा आग्रह क्यों किया है। वे दृढ़ विश्वासके साथ घोषित करते हैं कि जो व्यक्ति — पुरुष या स्त्री — अपनी वीर्यशक्ति पर पूरा नियंत्रण पा लेता है, वह शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक — अपनी सम्पूर्ण सत्ताको बलवान बनाता है और अैसी शक्तियां प्राप्त करता है, जो अन्य किसी साधन द्वारा नहीं पायी जा सकतीं।

अैसे महान ब्रह्मचारियोंके जीवित अुदाहरण अधिक संख्यामें नहीं मिलते या कि बिलकुल ही नहीं मिलते, अिस बातसे पाठकोंको विचलित नहीं होना चाहिये। हम जिन ब्रह्मचारियोंको आज अपने आसपास देखते हैं वे बहुत ही अधूरे नमूने हैं। अधिकसे अधिक वे ब्रह्मचर्यके साधक होते हैं; अुनका अपने शरीर पर काबू होता है, किन्तु मन पर नहीं। अिन्द्रिय-सुखके लालचसे वे परे हो गये हों, अैसी अनकी स्थिति नहीं होती। लेकिन अिसका कारण यह नहीं है कि ब्रह्मचर्यकी सिद्धि अितनी असाध्य है। अेक कारण तो यह है कि सामाजिक वातावरण अुनके अिस प्रयत्नके आड़े आता है; दूसरे, जो लोग अिस दिशामें अीमानदारीसे कोशिश करते हैं अुनमें से अधिकांश अनजाने ही अिस विशेष विकारके नियंत्रणकी कोशिश अिसे अन्यान्य विकारोंसे अलग मानकर करते हैं, जब कि यह कोशिश सफल तभी हो सकती है जब वह अुसके साथ ही साथ अन्य सब विकारोंको जीतनेके लिअे भी हो।

हरिजन, २१-३-'३६

जो दूसरी अिन्द्रियोंको जहां-तहां भटकने देता है और अेक ही अिन्द्रियको रोकनेकी कोशिश करता है, वह निकम्मी कोशिश करता है, अिसमें क्या शक है? कानोंसे विकारकी बातें सुने, आंखोंसे विकार पैदा

करनेवाली चीजें देखे, जीभसे विकारोंको तेज करनेवाली चीजें स्वादसे खाय, हाथसे विकारोंको तेज करनेवाली वस्तुओंको छुअे और फिर भी जननेन्द्रियको रोकनेका अिरादा कोअी रखे, तो यह आगमें हाथ डालकर न जलनेकी कोशिश करने जैसा होगा। अिसलिअे जो जननेन्द्रियको रोकनेकी ठान ले, अुसको तमाम अिन्द्रियोंको विकारोंसे रोकनेकी ठान ही लेना चाहिये। ब्रह्मचर्यकी संकुचित व्याख्यासे नुकसान हुआ है, अैसा मुझे हमेशा लगा है। मेरी तो यह पक्की राय है और मेरा अनुभव भी है कि अगर हम सब अिन्द्रियोंको अेक साथ वशमें लानेकी आदत डालें, तो जननेन्द्रियको वशमें लानेकी कोशिश तुरन्त सफल होगी।

ब्रह्मचर्यका मूल अर्थ सब याद करें; ब्रह्मचर्यका अर्थ है ब्रह्मकी — सत्यकी — खोजमें चर्या अर्थात् अुनसे संबंधित आचार। अिस मूल अर्थमें से सब अिन्द्रियोंका संयम यह विशेष अर्थ निकलता है। सिर्फ जननेन्द्रियका संयम अैसा अधूरा अर्थ तो हम भूल ही जायं।

मंगल-प्रभात, अध्याय ३, पृ० १९–२०, १९५८

८

विवाह अेक धार्मिक संस्कार है

मानव-समाजका निरन्तर विकास होता रहता है; यह अेक प्रकारका आध्यात्मिक विकास है। अगर अैसा हो तो अुसका आधार शरीरकी मांगों पर अधिकाधिक नियंत्रण लगाने पर होना चाहिये। अिस प्रकार विवाहको अेक धार्मिक संस्कार मानना चाहिये, जो पति-पत्नी पर यह संयम लगाता है कि वे केवल अपने बीच ही संभोग कर सकते हैं, केवल प्रजोत्पत्तिके लिअे ही संभोग कर सकते हैं और वह भी तभी जब पति-पत्नी दोनों अैसी अिच्छा रखते हों और अुसके लिअे तैयार हों।

अगर हम अैसा मानकर . . . चलें कि प्रजोत्पत्तिके हेतुकी मर्यादासे बाहर जाकर भी स्त्रीसंग करना आवश्यक है, तो फिर स्त्रीओंके लिअे

कोअी गुंजाअिश ही नहीं रह जाती। परन्तु यह मान्यता गलत है, क्योंकि संसारके हरअेक भागमें मानव-जातिके कुछ सर्वोच्च स्त्री-पुरुषोंके अैसे प्रमाणभूत अुदाहरण मिल आते हैं, जिन्होंने पूर्ण आत्म-संयम या ब्रह्मचर्यका पालन किया था। संयमकी संभावना अथवा वांछनीयताके विरुद्ध यह कहना कोअी दलील नहीं है कि मानव-जातिके विशाल बहुसंख्यक भागके लिअे अैसा संयम कठिन है। आजसे सौ वर्ष पहले जो बात मानव-जातिके बहुत बड़े भागके लिअे संभव नहीं थी वह आज संभव हो गअी है। और अनन्त प्रगति करनेके लिअे हमारे सामने जो असीम कालचक्र खुला पड़ा है, अुसमें यह १०० वर्षका समय भला किस गिनतीमें है? अगर वैज्ञानिकोंका कहना सच हो तो अनन्त-असीम कालकी तुलनामें केवल कल ही यह मानव-शरीर हमें प्राप्त हुआ है। अिसकी सीमाको कौन जानता है, अिसकी सीमा निर्धारित करनेकी कौन हिम्मत कर सकता है? बेशक, हम प्रतिदिन अुसकी भला या बुरा काम करनेकी अनन्त शक्तिका परिचय पाते रहते हैं।

यदि अिन्द्रिय-संयमकी संभावना और वांछनीयताको स्वीकार कर लिया जाय, तो हमें अुसकी सिद्धिके अुपाय खोजने चाहिये और अुन पर अमल करना चाहिये। और जैसा कि मैंने अपने अेक पिछले लेखमें कहा है, अगर हम संयम और अनुशासनका जीवन बिताना चाहते हों, तो हमें अपने जीवनमें आमूल परिवर्तन करना होगा। लड्डू हमारे पेटमें भी जाय और हाथमें भी रहे, यह संभव नहीं है। अगर हम जननेन्द्रिय पर अंकुश लगाना चाहें तो हमें दूसरी सारी अिन्द्रियों पर भी अंकुश लगाना चाहिये। अगर आंख, कान, नाक, जीभ और हाथ-पैरकी लगाम ढीली कर दी जाय, तो जननेन्द्रिय पर अंकुश रखना असंभव हो जायगा। चिड़चिड़ेपन, हिस्टीरिया और पागलपनके भी अधिकतर मामलोंका कारण — जिन्हें आज गलतीसे अिन्द्रिय-संयमके प्रयत्नोंका फल बताया जाता है — वास्तवमें अन्य अिन्द्रियोंके असंयममें देखनेको मिलेगा। किसी भी पापकी, कुदरतके कानूनोंके किसी भी भंगकी, सजा मिले बिना नहीं रहती।

मुझे शब्दोंके बारेमें तकरार नहीं करनी चाहिये। यदि आत्म-संयम ठीक अुसी अर्थमें कुदरतके काममें हस्तक्षेप माना जाय, जिस अर्थमें प्रजोत्पत्तिको रोकनेके लिअे कृत्रिम साधनोंका अुपयोग, तो भले ही अैसा माना जाय। लेकिन मैं फिर भी यही कहूंगा कि पहला हस्तक्षेप नियमानुसार और अिष्ट है, क्योंकि वह व्यक्तियों और समाजका कल्याण करनेवाला है, जब कि दूसरा हस्तक्षेप व्यक्ति और समाज दोनोंको नीचे गिराता है और अिसलिअे नियमके विरुद्ध है। आत्म-संयम सन्तानकी संख्याका नियमन करनेका अधिकसे अधिक निश्चित और अेकमात्र मार्ग है। कृत्रिम साधनों द्वारा सन्तति-नियमन करनेका मार्ग मानव-जातिकी आत्महत्याका मार्ग है।

मैं दुःखके साथ अिस बातको जानता हूं कि आत्म-संयम सिद्ध करना आसान नहीं है। लेकिन अुसकी धीमी प्रगतिसे हमें घबराना नहीं चाहिये। अुतावलेपनसे मजदूर वर्गोंमें पाअी जानेवाली अत्यधिक प्रजोत्पत्तिकी बुराअीका अन्त नहीं आयेगा। मजदूरोंमें काम करनेवाले कार्यकर्ताओंके सामने भगीरथ कार्य पड़ा हुआ है। वे अपने जीवनसे आत्म-संयमके अुन पाठोंको निकाल न दें, जो मानव-समाजके बड़ेसे बड़े शिक्षकोंने अपने अनुभवोंके समृद्ध भंडारमें से हमें पढ़ाये हैं। जो मूलभूत सत्य अुन्होंने हमें दिये हैं, अुनका परीक्षण अुन्होंने अैसी प्रयोगशालामें किया था, जो आजकी अद्यतन स्थितियोंमें पाअी जानेवाली किसी भी अुत्तम प्रयोगशालासे अधिक अच्छी थी। आत्म-संयमकी आवश्यकता अुन सब महापुरुषोंकी अेक सामान्य शिक्षा और अुपदेश है।

यंग अिंडिया, १६-९-'२६

९

स्त्री-सुधारकोंके लिअे

अेक बहनके साथ हुअी अपनी अेक गंभीर चर्चामें मैंने देखा कि कृत्रिम अुपायोंके अुपयोगके बारेमें मेरी जो स्थिति है, अुसे अभी तक अच्छी तरह समझा नहीं गया है। मैं अुनका विरोध अिसलिअे नहीं करता कि वे अुपाय पश्चिमसे हमारे यहां आये हैं। जब मैं जानता हूं कि कुछ पश्चिमी वस्तुओंसे हमें अुसी तरह लाभ होगा जैसे पश्चिमको हुआ है, तब मैं कृतज्ञतापूर्वक अुनका अुपयोग करता हूं। कृत्रिम अुपायोंका विरोध मैं अुनके गुण-दोषोंके आधार पर करता हूं।

मैं मानता हूं कि कृत्रिम अुपायोंके बुद्धिमानसे बुद्धिमान हिमायती भी अुनके अुपयोगको अैसी विवाहित स्त्रियों तक ही मर्यादित रखना चाहते हैं, जो अपनी और अपने पतियोंकी विषय-वासना तो तृप्त करना चाहती हैं, परन्तु अुसके फलस्वरूप अुत्पन्न होनेवाली सन्तान नहीं चाहतीं। मैं अिस अिच्छाको मनुष्यमें अप्राकृतिक मानता हूं और अिसकी पूर्तिको मानव-समाजकी आध्यात्मिक प्रगतिके लिअे बाधक समझता हूं।

अिसके खिलाफ अन्य अनेक प्रमाणोंके साथ पेन (अिंग्लैण्ड) के प्रसिद्ध डॉक्टर लॉर्ड डाअुसनका यह प्रमाण* भी पेश किया जाता है:

> “स्त्री-पुरुषोंका प्रणय दुनियाकी दुर्दम और प्रभावशाली शक्तियोंमें से अेक है। यह वृत्ति मानव-स्वभावके साथ अिस तरह जुड़ी हुअी है और अितनी प्रबल है कि मनुष्य पर अिसके असरको अेक सत्य वस्तु स्वीकार किये बिना हमारा काम नहीं चल सकता। आप अुसको दबा नहीं सकते। आप अुसको अच्छे मार्ग पर मोड़ सकते हैं, परन्तु बाहर निकलनेका मार्ग तो वह अवश्य ही खोजेगी; और यदि वह मार्ग अपर्याप्त होगा अथवा

* स्थानाभावके कारण लॉर्ड डाअुसनके वक्तव्यमें थोड़ी काटछांट करनी पड़ी है। — संपादक

अुसमें अनुचित रूपसे विघ्न खड़े होंगे, तो वह मजबूर होकर टेढ़े मार्ग पर चली जायगी। आत्म-संयमकी भी अेक मर्यादा होती है; अुस मर्यादासे बाहर जानेका प्रयत्न हो तो वह संयम टूट जाता है। और यदि किसी समाजमें विवाह कठिन हों अथवा देरसे होते हों, तो स्त्री-पुरुषके बीच अनैतिक सम्बन्ध कायम हुअे बिना नहीं रहेंगे।

"प्रजोत्पत्तिके अलावा स्त्री-पुरुषके संभोगका अेक स्वतंत्र प्रयोजन भी है। वह विवाहित जीवनमें स्वास्थ्य और सुखकी प्राप्तिके लिअे अेक आवश्यक वस्तु है। यदि संभोग अीश्वरकी अेक देन हो तो अुसका अुपयोग करनेकी कला हमें सीखनी ही चाहिये। अुसके अपने क्षेत्रमें अुसका अैसा विकास करना चाहिये, जिससे किसी अेकको ही नहीं परन्तु स्त्री-पुरुष दोनोंको शारीरिक तृप्ति मिले। पति-पत्नीके सम्बन्धोंमें परस्पर आनन्दकी प्राप्तिसे अुनके बीचका प्रेम-बन्धन दृढ़ होता है और अुनका विवाह-सम्बन्ध दीर्घ काल तक टिका रहता है। अधिकतर विवाह-सम्बन्ध अतिशय प्रणयके कारण नहीं, परन्तु अपर्याप्त और भद्दे प्रणयके कारण असफल सिद्ध होते हैं।

"अब सन्तति-नियमनका विचार दृढ़ हो गया है। वह अच्छा हो या बुरा, अुसने स्थापित सत्यका रूप ले लिया है। अिस-लिअे हमें अुसे स्वीकार करना ही होगा। हम अुसकी चाहे जितनी निन्दा करें, वह नष्ट होनेवाला नहीं है। माता-पिता जिन कारणोंसे सन्तानकी संख्या पर मर्यादा लगाना चाहते हैं, वे कभी कभी स्वार्थपूर्ण होते हैं, परन्तु अकसर प्रशंसनीय और प्रतीतिकारक होते हैं। विवाह करके सन्तान पैदा करनेकी अिच्छा तथा सन्तान जीवन-संग्राममें सफलतासे जूझ सके अिस प्रकार पाल-पोस कर अुसे तैयार करनेकी अिच्छा, सीमित आय, जीवन-निर्वाहका खर्च, करोंका बोझ — ये अैसे कारण हैं जो सन्तति-नियमनका मार्ग अपनानेके लिअे दम्पतीको मजबूर कर देते हैं। अिसके सिवा शिक्षित वर्गोंकी स्त्रियां सार्वजनिक जीवनमें और अपने पतियोंके कार्यमें भाग लेनेकी अिच्छा रखती

हैं; अिस अिच्छाका बार बार होनेवाली प्रसूतियोंके साथ मेल नहीं बैठता।... परन्तु बहुतसे लोग कहते हैं: 'सन्तति-नियमन आवश्यक हो सकता है, परन्तु स्वेच्छापूर्ण संयम द्वारा किया हुआ सन्तति-नियमन ही अुचित माना जायगा।' अैसा संयम या तो परिणामकारी सिद्ध नहीं होगा और यदि हुआ भी तो अव्यावहारिक तथा स्वास्थ्य और सुखके लिअे हानिकारक सिद्ध होगा। परिवारके बढ़ानेकी मर्यादा यदि चार बालकों तक बांध दी जाय, तो अिसका मतलब होगा विवाहित दम्पती पर अैसा संयम लादना, जो लम्बी अवधियों तक लगभग ब्रह्मचर्य पालने जैसा ही होगा; और जब हम अिस बातको याद करते हैं कि आर्थिक कारणोंकी वजहसे यह संयम विवाहित जीवनके प्रारंभिक वर्षोंमें — जब नवदंपतीकी काम-वासना अधिकसे अधिक तीव्र होती है — कड़ेसे कड़ा होना चाहिये, तब मैं कहूंगा कि यह अेक अैसी मांग है जिसे आम लोगोंके लिअे पूरा करना असंभव है। मैं यह भी कहूंगा कि अिस मांगको पूरा करनेके प्रयत्न लोगोंकी संयम-शक्ति पर अैसा जोर डालेंगे, जो स्वास्थ्य और सुखके लिअे हानिकारक साबित होगा तथा समाजकी नीतिको भारी खतरेमें डाल देगा। यह मांग तर्कसंगत नहीं है। यह प्रयत्न वैसा ही है जैसा प्यासेके सामने पानी रखकर अुसे पीनेसे रोकना। नहीं, संयम द्वारा सन्तति-नियमन अपरिणामकारी होता है, अथवा यदि परिणामकारी भी हो तो हानिकारक सिद्ध होता है।

"कहा जाता है कि यह अप्राकृतिक है और अिसके मूलमें ही अनीति निहित है। कुदरती शक्तियोंको वशमें करना और मनुष्यकी अिच्छाके अनुसार अुनका अुपयोग करना सभ्यताका अेक अंग है। जब प्रसूतिके समय नशेकी दवाका पहले-पहल अुपयोग किया गया, तब लोगोंने अैसा शोरगुल मचाया कि अुसका अुपयोग अप्राकृतिक और पापपूर्ण है, क्योंकि भगवान चाहता है कि प्रसूतिके समय स्त्रीको कष्ट

भोगना ही चाहिये । कृत्रिम अुपायोंसे सन्तति-नियमन करना अपरके अिलाजसे थोड़ा भी ज्यादा अप्राकृतिक नहीं है । सन्तति-नियमनका अुपयोग अच्छा है; अुसका दुरुपयोग बुरा है।"

लॉर्ड डाअुसनकी ख्यातिसे कोअी अिनकार नहीं कर सकता। परन्तु अेक डॉक्टरके नाते अुनकी महत्ताका अुचित आदर करते हुअे भी अुनके प्रमाणकी कीमत पर शंका अुठानेका प्रलोभन मुझे होता है; खासकर अुस समय जब वह अैसे स्त्री-पुरुषोंके अनुभवके खिलाफ पेश किया जाता है, जिन्होंने किसी तरहकी नैतिक अथवा शारीरिक हानि अुठाये बिना ब्रह्मचर्यका जीवन बिताया है । डॉक्टर सामान्यतः अैसे लोगोंके सम्पर्कमें आते हैं, जो स्वास्थ्यके नियमोंका अुल्लंघन करके किसी रोगके शिकार हो जाते हैं । अिसलिअे वे यह तो सफलतापूर्वक बता देते हैं कि रोगियोंको अच्छा होनेके लिअे क्या क्या करना चाहिये, परन्तु वे हमेशा यह नहीं जान सकते कि स्वस्थ पुरुष और स्त्रियां अमुक दिशामें क्या क्या कर सकते हैं । अिसलिअे लॉर्ड डाअुसनने विवाहित लोगों पर संयम अथवा ब्रह्मचर्यके प्रभावका जो प्रमाण दिया है, अुस पर अधिकसे अधिक सावधानीसे विचार करना चाहिये । अिसमें शंका नहीं कि विवाहित लोगोंकी वृत्ति विषय-वासनाकी तृप्तिको अपने आपमें अुचित माननेकी रहती है । परन्तु आधुनिक युगमें, जब किसी भी बातको गृहीत मान कर नहीं चला जाता और हर बातकी भलीभांति छानबीन की जाती है, अिसे गृहीत मानकर चलना निश्चित ही गलत होगा कि चूंकि अभी तक हम विवाहित जीवनमें विषय-वासनाकी तृप्तिमें फंसे रहे अिसलिअे यह वस्तु अुचित है या स्वास्थ्यप्रद है। अनेक पुराने रिवाजोंको हमने छोड़ दिया है और अुनके परिणाम अच्छे आये हैं । तब अिस खास रिवाजको ही परीक्षाके क्षेत्रसे बाहर क्यों रखा जाय, विशेषतः जब अैसे लोगोंका अनुभव हमारे सामने है, जो विवाहित स्त्री-पुरुषोंके रूपमें भी संयमका जीवन बिता रहे हैं और अुससे दोनोंको शारीरिक और नैतिक लाभ हुआ है?

परन्तु मैं भारतमें सन्तति-नियमनके कृत्रिम अुपायोंका विरोध भी खास कारणोंसे करता हूं। भारतके नवयुवक नहीं जानते कि विषय-वासनाका संयम क्या चीज है। यह अुनका दोष नहीं है। अुनका विवाह कम अुम्रमें कर दिया जाता है। यह अेक रिवाज बन गया है। कोअी अुन्हें विवाहित जीवनमें संयम पालनेकी बात नहीं कहता। माता-पिता नाती-पोते देखनेके लिअे अधीर हो जाते हैं। बेचारी बालवधुओंसे आसपासके लोग अैसी आशा रखते हैं कि वे अधिकसे अधिक गतिसे सन्तान अुत्पन्न करें। अैसे वातावरणमें कृत्रिम साधनोंका अुपयोग केवल अिस बुराअीको बढ़ानेका ही काम कर सकता है। अिन बालवधुओंको, जिनसे अपने पतियोंकी काम-वासनाके अधीन होनेकी आशा रखी जाती है, अब यह सिखाना होगा कि सन्तान अुत्पन्न करनेकी अिच्छा रखे बिना विषय-वासनाकी तृप्ति चाहना अच्छी बात है। और अिस दोहरे हेतुको पूरा करनेके लिअे अुन्हें कृत्रिम साधनोंका सहारा लेना होगा!!!

अिसे मैं विवाहित स्त्रियोंके लिअे अत्यन्त हानिकारक शिक्षा मानता हूं। मैं यह नहीं मानता कि स्त्री काम-विकारकी अुतनी ही शिकार बनती है जितना पुरुष। पुरुषके बनिस्बत स्त्रीके लिअे आत्म-संयम पालना ज्यादा आसान होता है। मैं मानता हूं कि अिस देशमें स्त्रीको दी जाने लायक सही शिक्षा यह होगी कि अुसे अपने पतिको भी 'नहीं' कहनेकी कला सिखाअी जाय; अुसे यह सिखाया जाय कि पतिके हाथोंमें केवल विषय-भोगका साधन या गुड़िया बनकर रहना अुसका कर्तव्य बिलकुल नहीं है। यदि स्त्रीके कर्तव्य हैं तो अुसके अधिकार भी हैं। जो लोग सीताको रामकी स्वेच्छासे बनी हुअी दासी समझते हैं, वे सीताकी स्वतंत्रताकी अूंचाअीको या हर बातमें राम द्वारा किये जानेवाले सीताके विचार और आदरको नहीं समझते। सीता अैसी लाचार और निर्बल स्त्री नहीं थी, जो अपनी रक्षा या अपने सतीत्वकी रक्षा करनेमें असमर्थ हो। भारतकी स्त्रियोंसे सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधन अपनानेको कहनेका अर्थ अधिक नहीं तो घोड़ेके सामने गाड़ी रखने-जैसा जरूर है। पहली बात है अुसे मानसिक

गुलामीसे मुक्त करना, अुन्हें अपने शरीरको पवित्र मानने की शिक्षा देना और राष्ट्र तथा मानव-जातिकी सेवाकी प्रतिष्ठा और गौरव सिखाना। यह मान लेना अनुचित होगा कि भारतकी स्त्रियां अिस गुलामीसे कभी छूट ही नहीं सकतीं और अिसलिअे प्रजोत्पत्तिको रोकने तथा अपनी यथोमुची तन्दुरुस्तीकी रक्षा करनेके लिअे अुन्हें कृत्रिम साधनोंका अुपयोग सिखानेके सिवा दूसरा कोअी रास्ता नहीं है।

जिन बहनोंका पुण्यप्रकोप अैसी स्त्रियोंके कष्टोंको देखकर जाग्रत हुआ है, जिन्हें अिच्छा या अनिच्छासे बच्चे पैदा करने पड़ते हैं, वे अुतावली न बनें। कृत्रिम साधनोंके पक्षमें किया जानेवाला प्रचार भी वांछित हेतुको अेक दिनमें सिद्ध नहीं कर देगा। हर पद्धतिके लिअे लोगोंको शिक्षा देना जरूरी होगा। मेरा कहना अितना ही है कि यह शिक्षा सही रास्ते ले जानेवाली होनी चाहिये।

हरिजन, २–५–'३६

१०

विवाहित ब्रह्मचर्य

विषयेन्द्रियोंका दमन हिमालय पहाड़ पर चढ़नेसे तो कठिन है ही, लेकिन अुसका परिणाम भी कितना अूंचा है! हिमालय पर चढ़नेवाला कुछ कीर्ति पायगा, क्षणिक सुख पायगा; अिन्द्रियजित मनुष्य आत्मानन्द पायगा और अुसका आनन्द दिन प्रतिदिन बढ़ता जायगा। ब्रह्मचर्यशास्त्रमें तो अैसा नियम माना गया है कि पुरुष-वीर्य कभी निष्फल होता ही नहीं, और होना भी नहीं चाहिये। और जैसा पुरुषके लिअे वैसा ही स्त्रीके लिअे भी है, अिसमें कोअी आश्चर्यकी बात नहीं है। जब मनुष्य अथवा पुरुष निर्विकार होते हैं तब वीर्यहानि असंभवित हो जाती है और भोगेच्छाका सर्वथा नाश हो जाता है। और जब पति-पत्नी संतानकी अिच्छा करते हैं, तभी अेक-दूसरेका मिलन होता है। और यही अर्थ गृहस्थाश्रमीके

ब्रह्मचर्यका है। अर्थात् स्त्री-पुरुषका मिलन सिर्फ संतानोत्पत्तिके लिअे ही अुचित है, भोगतृप्तिके लिअे कभी नहीं। यह हुअी कानूनी वात, अथवा आदर्शकी वात। यदि हम अिस आदर्शको स्वीकार करें तो हम समझ सकते हैं कि भोगेच्छाकी तृप्ति अनुचित है, और हमें अुसका यथोचित त्याग करना चाहिये। यह ठीक है कि आज कोअी अिस नियमका पालन नहीं करते। आदर्शकी वात करते हुअे हम शक्तिका खयाल नहीं कर सकते। लेकिन आजकल भोगतृप्तिको आदर्श वताया जाता है। अैसा आदर्श कभी हो ही नहीं सकता, यह स्वयंसिद्ध है। यदि भोग आदर्श है तो अुसे मर्यादा नहीं होनी चाहिये। अमर्यादित भोगसे नाश होता है, यह सभी स्वीकार करते हैं। त्याग ही आदर्श हो सकता है और प्राचीन कालसे रहा है।

मेरा कुछ अैसा विश्वास वन गया है कि ब्रह्मचर्यके नियमोंको हम जानते नहीं हैं, अिसलिअे वड़ी आपत्ति पैदा होती है, और ब्रह्मचर्य-पालनमें हम अनावश्यक कठिनाअी महसूस करते हैं। अव जो आपत्ति मुझे पत्रलेखकने वताअी है वह आपत्ति ही नहीं रहती है, क्योंकि सिर्फ संततिके कारण तो अेक ही वार मिलन हो सकता है; अगर वह निष्फल गया तो दुवारा अुन स्त्री-पुरुषोंका मिलन होना ही नहीं चाहिये। अिस नियमको जाननेके वाद अितना ही कहा जा सकता है कि जव तक स्त्रीने गर्भ धारण नहीं किया, तव तक प्रत्येक ऋतुकालके वाद जव तक गर्भ धारण नहीं हुआ है तव तक, प्रतिमास अेक वार स्त्री-पुरुषका मिलन क्षंतव्य हो सकता है, और यह मिलन भोगतृप्तिके लिअे न माना जाय। मेरा यह अनुभव है कि जो मनुष्य वचनसे और कार्यसे विकार-रहित होता है, अुसे मानसिक अथवा शारीरिक व्याधिका किसी प्रकारका डर नहीं होता। अितना ही नहीं, वल्कि अैसे निर्विकार व्यक्ति व्याधियोंसे भी मुक्त होते हैं, और अिसमें कोअी आश्चर्यकी वात नहीं है। जिस वीर्यसे मनुष्य जैसा प्राणी पैदा हो सकता है, अुसके अविच्छिन्न संग्रहसे अमोघ शक्ति पैदा होनी ही चाहिये। यह वात शास्त्रोंमें तो कही ही गअी है, लेकिन हरअेक मनुष्य अिसे अपने

यत्नसे सिद्ध कर सकता है। और जो नियम पुरुषोंके लिअे है वही स्त्रियोंके लिअे भी है। आपत्ति सिर्फ यह है कि मनुष्य मनसे विकारमय रहते हुअे शरीरसे विकार-रहित होनेकी व्यर्थ आशा करता है और अन्तमें मन और शरीर दोनोंको क्षीण करता हुआ गीताकी भाषामें मूढ़ात्मा और मिथ्याचारी बनता है।

हरिजनसेवक, १३-३-'३७

११

अनचाहा मातृत्व

सुदूर पश्चिमसे हर हफ्ते हिन्दुस्तानमें जो सामाजिक साहित्य आता रहता है, अुससे तो पढ़नेवालेके दिल पर बिलकुल जुदा ही असर पड़ता है। यही मालूम होता है, मानो अमेरिकामें तो सिवा बेवकूफोंके कोअी भी अिन आधुनिक साधनोंका विरोध नहीं करते हैं; ये मनुष्यको अुस अन्धविश्वाससे मुक्ति प्रदान करते हैं, जो अब तक शरीरको गुलाम बनाकर संसारके सर्वश्रेष्ठ अैहिक सुखसे मनुष्यको वंचित करके अुनके शरीरको निष्प्राण बना देनेकी शिक्षा देता चला आ रहा है। यह साहित्य भी अुतना ही क्षणिक नशा पैदा करता है जितना कि वह कर्म, जिसको वह शिक्षा देता है और जिसे अुसके साधारण परिणामके खतरेसे बचकर करनेका वह प्रोत्साहन देता है। पश्चिमसे आनेवाले अुन पत्रोंको मैं 'हरिजन' के पाठकोंके सामने नहीं पेश करता, जिनमें व्यक्तिगत रूपसे अिन साधनोंका निषेध होता है। वे साधककी दृष्टिसे मेरे लिअे ही अुपयोगी हैं। साधारण पाठकोंके लिअे अुनका मूल्य बहुत कम है।

संतति-नियमनके साधनोंके प्रयोगमें शराबसे अनन्त गुना प्रबल प्रलोभन होता है। पर अिस मारक प्रलोभनके कारण वह अुस नशकोली शराबकी अपेक्षा अधिक जायज नहीं हो जाता। और चूंकि अिन दोनोंका प्रचार बढ़ता ही जा रहा है, अिस कारणसे निराश होकर अिनका विरोध

करना भी छोड़ा नहीं जा सकता है। अगर अिनके विरोधियोंको अपने कार्यकी पवित्रतामें श्रद्धा है; तो अुन्हें अुसे बराबर जारी रखना चाहिये। असे अरण्य-रोदनमें भी वह बल होता है, जो मूढ़ जन-समुदायके सुरमें सुर मिलानेवालेकी आवाजमें नहीं हो सकता। क्योंकि अरण्यमें रोने-वालेकी आवाजमें चिन्तन और मननके अलावा अटूट श्रद्धा होती है, जब कि सर्व-साधारणके अिस शोरकी जड़में विषय-भोगकी व्यक्तिगत लालसा और अनचाही संतति तथा दुखिया माताओंके प्रति झूठी और निरी भावुक सहानुभूतिके अलावा और कुछ नहीं होता। अिस मामलेमें व्यक्तिगत अनुभववाली दलीलमें अुतना ही वजन है जितना कि अेक शराबीके किसी कार्यमें होता है। और सहानुभूति-वाली दलील अेक धोखेकी टट्टी है, जिसके अन्दर पैर रखना भी खतरनाक है। अनचाहे बच्चोंके तथा मातृत्वके कष्ट तो कल्याणकारी प्रकृति द्वारा नियोजित सजाअें और चेतावनियां हैं। संयम और अिन्द्रिय-नियमनके कानूनकी जो परवाह नहीं करेगा, वह तो अेक तरहसे अपनी आत्महत्या ही करेगा। यह जीवन तो अेक परीक्षा है। अगर हम अिन्द्रियोंका नियमन नहीं कर सकते, तो हम असफलताको न्योता देते हैं और कायरोंकी तरह युद्धसे मुंह मोड़कर जीवनके अेकमात्र आनन्दसे अपने आपको वंचित करते हैं।

हरिजनसेवक, २७–३–’३७

१२

स्त्रियोंको 'नहीं' कहना सीखना चाहिये

मेरे पास जितने प्रमाण हैं वे तो सब यही बताते हैं कि संयम-शक्तिका अभाव स्त्रीकी अपेक्षा पुरुषमें ही अधिक होता है। पर मनुष्यको अपनी संयम रखनेकी अशक्तिको कम समझकर अुसकी अुपेक्षा करनेकी जरूरत नहीं। अुसे बड़े कुटुम्बकी संभावनाका बहादुरीसे सामना करना चाहिये, और अुस परिवारका पालन-पोषण करनेका अच्छेसे अच्छा जरिया ढूंढ़ लेना चाहिये। अुसे जानना चाहिये कि करोड़ों आदमियोंको अिन कृत्रिम साधनोंका पता ही नहीं है। अिन साधनोंको काममें लानेवालोंकी संख्या बहुत बहुत होगी तो कुछेक हजारकी ही होगी। अुन करोड़ोंको अिस बातका भय नहीं होता कि बच्चोंका पालन वे किस तरह करेंगे, यद्यपि वे सब बच्चे मां-बापकी अिच्छासे पैदा नहीं होते। मैं चाहता हूं कि मनुष्य अपने अपने कर्मके परिणामका सामना करनेसे अिनकार न करे। अैसा करना कायरता है। जो लोग कृत्रिम साधनोंको काममें लाते हैं, वे संयमका गुण नहीं सीख सकते। अुन्हें अिसकी जरूरत नहीं पड़ेगी। कृत्रिम साधनोंके साथ भोगा हुआ विषय-भोग बच्चोंका आना तो रोकेगा, पर पुरुष और स्त्री दोनोंकी — स्त्रीकी अपेक्षा पुरुषकी अधिक — जीवन-शक्तिको चूस लेगा। आसुरी वृत्तिके खिलाफ युद्ध करनेसे अिनकार करना नामर्दी है। पत्रलेखक अगर अनचाहे बच्चोंको रोकना चाहता है, तो अुसके सामने अेकमात्र अचूक और सम्मानित मार्ग यही है कि अुसे संयम पालन करनेका निश्चय कर लेना चाहिये। सौ बार भी अुसके और अुसकी पत्नीके प्रयत्न निष्फल जायं तो भी क्या? सच्चा आनन्द तो युद्ध करनेमें है। अुसका परिणाम तो अीश्वरकी कृपासे ही आता है।

हरिजनसेवक, २४–४–'३७

सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधनोंका अुपयोग स्त्रीत्वके लिये अपमान-जनक है। किसी वेश्या और सन्तति-नियमनके साधनोंका अुपयोग करने-

वाली स्त्रीके बीच फर्क सिर्फ यही है कि पहली अनेक पुरुषोंको अपना शरीर बेचती है, जब कि दूसरी अेक पुरुषको। जब तक पत्नीको सन्ततिकी अिच्छा न हो, पतिको कोअी हक नहीं कि वह पत्नीको छुअे। और स्त्रीमें अितना संकल्प-बल होना चाहिये कि वह अपने पतिकी अिच्छाका भी विरोध कर सके।

हरिजनसेवक, ५–५–'४६

स्त्रियोंको अपने पतियोंकी विषय-भोगकी अिच्छाका विरोध करना पड़ेगा। अगर कृत्रिम साधनोंका सहारा लिया जायगा, तो अुसके भयंकर परिणाम आयेंगे। स्त्री-पुरुष केवल विषय-भोगके लिअे ही जीयेंगे। वे कमजोर और अस्थिर मस्तिष्कवाले और वास्तवमें मानसिक तथा नैतिक दृष्टिसे बिलकुल निकम्मे हो जायंगे।

गांधीजीकी अेक मुलाकातकी रिपोर्टसे, अमृत-बाजार पत्रिका, १२–१–'३५

मुझे अैसा लगा है कि जीवनके जितने वर्ष मेरे पास अभी बाकी हैं, अुनमें यदि मैं स्त्रियोंको यह सत्य समझा सका कि वे स्वतंत्र हैं, तो भारतमें हमारे लिअे सन्तति-नियमनकी समस्या नहीं रहेगी। यदि स्त्रियां विषय-वासनाकी तृप्तिके लिअे पतियोंके अपने पास आने पर अुनसे केवल 'नहीं' कहना सीख जावें . . . तो सब कुछ ठीक हो जाय। . . . सच्ची समस्या तो यह है कि स्त्रियां पतियोंका विरोध ही नहीं करना चाहतीं। तब सारी बात शिक्षा पर आकर टिक जाती है। मैं चाहता हूं कि स्त्री विरोधके अपने मुख्य अधिकारका अुपयोग करना सीखे। आज वह सोचती है कि अुसे पतिकी अिच्छाका विरोध करनेका अधिकार नहीं है।

गांधीजीसे हुअी मिसेज मार्गरेट सैंगरकी बातचीतकी रिपोर्टसे, अेशिया, नवंबर १९३५

१२

आधुनिक युवक-युवतियां

आजकल बड़े-बूढ़े जो कुछ भी कहें अुस पर विश्वास न करना युवकोंमें अेक फैशनकी बात हो गअी है। मैं अैसा कहनेके लिअे तैयार नहीं हूं कि अिस बातमें बिलकुल ही औचित्य नहीं है। परन्तु मैं देशके युवक-युवतियोंको सावधान करना चाहता हूं कि बड़े-बूढ़े जो कुछ कहें अुसका हमेशा केवल अिसीलिअे खंडन करना कि वह बूढ़े लोगों द्वारा कहा गया है सही नहीं है। जिस प्रकार समझदारीकी बातें अक्सर बच्चोंके मुंहसे निकलती हैं, अुसी प्रकार वे अक्सर बूढ़ोंके मुंहसे भी निकलती हैं। सुनहला नियम यही है कि हर बातको बुद्धि और अनुभवकी कसौटी पर कसा जाय, भले वह किसीके भी मुंहसे कही गअी हो। मैं फिरसे कृत्रिम साधनोंसे सन्तति-नियमन करनेकी बात पर लौटता हूं। हमारे अन्दर यह बात जमा दी गअी है कि काम-वासनाकी तृप्ति मनुष्यका अुतना ही पवित्र कर्तव्य है, जितनी वैध रूपमें लिये हुअे कर्जकी अदायगी; और यह भी कहा जाता है कि अैसा न करनेके फलस्वरूप बुद्धिके ह्रासका दण्ड भुगतना पड़ेगा। अिस काम-वासनाको सन्तानोत्पत्तिकी अिच्छासे अलग किया जाता है, और कृत्रिम साधनोंके हामी कहते हैं कि गर्भाधान तो अेक आकस्मिक घटना है, जिसे दोनों पक्षोंको यदि सन्तानकी अिच्छा न हो, तो रोकना चाहिये। मैं दावेसे कहता हूं कि अिस सिद्धान्तका प्रचार कहीं भी अत्यन्त खतरनाक है। भारत जैसे देशमें तो यह और भी भयंकर है, क्योंकि यहां मध्यम श्रेणीका पुरुषवर्ग अपनी जननेन्द्रियके दुरुपयोगके कारण शरीर और मनसे दुर्बल बन गया है। यदि काम-वासनाकी तृप्ति धर्म है, तब तो अिस अप्राकृतिक पापके बारेमें मैंने कुछ समय पहले लिखा था वह और तृप्तिके अन्य कअी अुपाय भी श्लाघनीय हो जायंगे। पाठकोंको ज्ञात होना चाहिये कि बड़े-बड़े आदमी भी जिसे काम-वासनाका विपर्यय कहा जाता है, अुसका समर्थन करते पाये गये हैं। अिस कथनसे पाठकोंको आघात लग सकता है। परन्तु यदि किसी भी कारणसे अिस बुराई पर

प्रतिष्ठाकी छाप लग जाती है, तो लड़के-लड़कियोंमें अपनी ही जातिके सदस्योंसे कामवासनाकी पूर्ति करनेका तूफान आ जायगा। मेरे लिअे कृत्रिम साधनोंका अुपयोग अुन साधनोंसे बहुत भिन्न नहीं है, जिनका लोगोंने अपनी काम-वासनाकी तृप्तिके लिअे आश्रय लिया है और जिनके परिणामोंका पता बहुत थोड़े लोगोंको है। मुझे मालूम है कि गुप्त पापने पाठ-शालाके लड़के-लड़कियोंका कैसा भयंकर विनाश किया है। विज्ञानके नाम पर कृत्रिम साधनोंके प्रचलित होने और समाजके प्रसिद्ध नेताओंकी अुस पर मुहर लग जानेसे समस्या और बढ़ गअी है; और जो सुधारक सामाजिक जीवनकी शुद्धिका काम करते हैं, अुनका कार्य आज असंभव-सा हो गया है। मैं पाठकोंको यह सूचना देते हुअे कोअी विश्वासघात नहीं कर रहा हूं कि अैसी कुमारी लड़कियां हैं, जिनकी प्रभाव पड़नेवाली अुम्र है और जो स्कूल-कॉलजोंमें पढ़ती हैं, परन्तु जो बड़ी अुत्सुकतासे संतति-निग्रहके साहित्य और पत्रिकाओंका अध्ययन करती हैं और अुनके पास अुसके साधन भी मौजूद हैं। अुनके प्रयोगको विवाहित स्त्रियों तक सीमित रखना असंभव है। जब विवाहके अुद्देश्य और अुच्चतम अुपयोगकी कल्पना ही पाशविक विकारकी तृप्ति हो और यह विचार तक न किया जाय कि अिस प्रकारकी तृप्तिका कुदरती नतीजा क्या होगा, तब विवाहकी सारी पवित्रता नष्ट हो जाती है।

मुझे अिसमें जरा भी शक नहीं कि जो विद्वान पुरुष और स्त्रियां मिशनरी जोशके साथ कृत्रिम साधनोंके पक्षमें आन्दोलन कर रहे हैं, वे देशके युवकोंकी अपार हानि कर रहे हैं। अुनका यह विश्वास झूठा है कि अैसा करके वे अुन गरीब स्त्रियोंको संकटसे बचा लेंगे, जिन्हें अपनी अिच्छाके विरुद्ध मजबूरन् बच्चे पैदा करने पड़ते हैं। जिन्हें बच्चोंकी संख्या मर्यादित करनेकी जरूरत है, अुनके पास तो अिनकी आसानीसे पहुंच नहीं होगी। हमारी गरीब औरतोंके पास न तो वह ज्ञान होता है और न वह तालीम होती है, जो पश्चिमकी स्त्रियोंके पास होती है। अवश्य ही यह आन्दोलन मध्यम श्रेणीकी स्त्रियोंकी तरफसे नहीं किया जा

रहा है, क्योंकि अुन्हें कमसे कम अिस ज्ञानकी जरूरत अुतनी नहीं है जितनी निर्धन वर्गोंकी स्त्रियोंको है।

परन्तु सबसे बड़ी हानि जो यह आन्दोलन कर रहा है, वह यह है कि पुराना आदर्श छोड़कर वह अुसके स्थान पर अेक अैसा आदर्श स्थापित कर रहा है, जिस पर अमल हुआ तो जातिका नैतिक और शारीरिक विनाश निश्चित है। वीर्यके व्यर्थ व्ययको प्राचीन साहित्यमें जो अितना भयंकर माना गया है, वह कोअी अज्ञानजन्य अंधविश्वास नहीं था। कोअी किसान अगर अपने पासका बढ़ियासे बढ़िया बीज पथरीली जमीनमें बोये या कोअी खेतका मालिक बढ़िया जमीनवाले अपने खेतमें अैसी परिस्थितियोंमें अच्छा बीज डाले जिनमें अुसका अुगना असंभव हो, तो अुसके लिअे क्या कहा जायगा? भगवानने पुरुषको अूंचीसे अूंची शक्तिवाला बीज प्रदान किया है और स्त्रीको अैसा खेत दिया है जिसके बराबर अुपजाअू धरती अिस दुनियामें और कहीं नहीं है। अवश्य ही पुरुषकी यह भयंकर मूर्खता है कि वह अपनी अिस सबसे कीमती संपत्तिको व्यर्थ जाने देता है। अुसे अपने अत्यन्त मूल्यवान जवाहरात और मोतियोंसे भी अधिक सावधानीके साथ अिसकी रक्षा करनी चाहिये। अिसी तरह वह स्त्री भी अक्षम्य मूर्खता करती है, जो अपने जीवोत्पादक क्षेत्रमें बीजको नष्ट हो जाने देनेके अिरादेसे ही ग्रहण करती है। वे दोनों अीश्वर-प्रदत्त प्रतिभाके दुरुपयोगके अपराधी माने जायंगे और जो चीज अुन्हें दी गअी है वह अुनसे छीन ली जायगी। कामकी प्रेरणा अेक सुन्दर और अुदात्त वस्तु है। अुसमें लज्जित होनेकी कोअी बात नहीं है। परन्तु वह संतानोत्पत्तिके लिअे ही बनाअी गअी है। अुसका और कोअी अुपयोग करना अीश्वर और मानवता दोनोंके प्रति पाप है। सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन पहले भी थे और आगे भी रहेंगे, परन्तु अुन्हें काममें लेना पहले पाप समझा जाता था। पापको पुण्य कहकर अुसका गौरव बढ़ाना हमारी पीढ़ीके ही भाग्यमें बदा है। मेरे खयालसे कृत्रिम साधनोंके हिमायती भारतके युवकोंकी सबसे

बड़ी कुसेवा यह कर रहे हैं कि अुनके दिमागोंमें गलत विचारधारा भर रहे हैं। भारतके युवा स्त्री-पुरुषोंको, जिनके हाथमें देशका भाग्य है, अिस झूठे देवतासे सावधान रहना चाहिये, अीश्वरने अुन्हें जो खजाना दिया है अुसकी रक्षा करनी चाहिये और अिच्छा हो तो अुसे अुसी काममें लगाना चाहिये जिसके लिअे वह बनाया गया है।

हरिजन, २८-३-'३६

१४

स्वेच्छाचारकी दिशामें

गांधीजीको लिखित अेक युवकके पत्रका अेक हिस्सा अिस प्रकार था :

"आप भारतीय युवकोंका मानस समझनेका दावा करते हैं। मैं किसीका प्रतिनिधि होनेका दावा नहीं करता। अतः किसी वर्गके प्रतिनिधिके रूपमें नहीं किन्तु अेक स्वतंत्र युवकके नाते मैं आपके अिस दावेको चुनौती देनेकी अनुमति लेता हूं। आजके मध्यम वर्गका युवक-समुदाय किन परिस्थितियोंसे गुजर रहा है; लंबी बेकारी, जीवनको कुचलनेवाले सामाजिक रीति-रिवाज और सहशिक्षण द्वारा अुत्पन्न प्रलोभन अुसकी कैसी दुर्दशा कर रहे हैं — अिसकी सही और पूरी जानकारी आपको है, अैसा मालूम नहीं होता। यह सब पुराने और नये विचारोंके बीच चल रहे संघर्षका परिणाम है और अिसमें युवकोंके पल्ले दुःख और पराजय ही आयी है। मैं आपसे नम्रतापूर्वक अनुरोध करता हूं कि आप युवकोंके प्रति दयाभाव रखें और अुन्हें नीतिकी अपनी अति शुद्धतावाली कसौटी पर न कसें। मैं तो अैसा मानता हूं कि यदि भोगतृप्ति दोनोंकी सहमतिसे और पारस्परिक प्रेमके साथ की जाय तो वह नैतिक ही है, भले वह विवाहके दायरेमें यानी अपनी स्त्रीके साथ हो या अुसके बाहर। सन्तति-नियमनके कृत्रिम अुपायोंकी शोधके बाद विवाहकी प्रथामें रहा हुआ संभोग-मर्यादाका आधार

नष्ट हो गया है। अब तो अुसकी अुपयोगिता जितनी ही रह गयी है कि अुससे सन्तानकी रक्षा और अुसके पल्लवनका ध्येय सधता है।"

अिस पत्र पर टिप्पणी लिखते हुअे गांधीजीने लिखा:

संयमके पालनके बिना स्त्री या पुरुष अपना नाश ही करेगा। अिन्द्रियों पर कोअी नियंत्रण न होना बिना पतवारकी नावमें सवार होने जैसा है। अैसी नाव अपने रास्तेकी पहली ही चट्टानसे टकराकर टूट जाती है। अिसीलिअे मैं संयम पर अितना जोर देता हूं। पत्र-लेखकका यह कहना ठीक है कि सन्तति-नियमनके कृत्रिम अुपायोंके आ जानेसे विषय-भोग सम्बन्धी विचारोंमें परिवर्तन हो गया है। यदि पारस्परिक सम्मतिसे भोग-सम्बन्ध — फिर भले वह विवाहके दायरेमें हो या अुसके बाहर और अिसी दलीलको थोड़ा और बढ़ा दिया जाय तो अैसा भी कह सकते हैं कि भले वह पुरुष-पुरुष अथवा स्त्री-स्त्रीके बीच ही क्यों न हो — नीतिमय बन जाता है, तब तो यौन-सम्बन्ध विषयक नीतिकी बुनियाद ही नष्ट हो जाती है और युवकोंके लिअे फिर सचमुच 'दुःख और पराजय' के सिवा और कुछ बाकी नहीं रहता। भारतमें अैसे अनेक युवक और युवतियां मिलेंगी, जो भोग-वासनाके जिस पाशमें वे अपनेको कैद पाते हैं अुससे छूटना चाहते हैं। यह वासना मनुष्यको गुलाम बनानेवाले प्रबलतम नशेसे भी ज्यादा प्रबल है। यह आशा रखना व्यर्थ है कि सन्तति-नियमनके कृत्रिम अुपायोंका अुपयोग केवल सन्तानकी संख्या मर्यादित करनेके लिअे ही होगा। नीतिमय जीवनकी आशा तभी तक है जब तक कि भोगेच्छाकी तृप्तिका सम्बन्ध स्पष्टतः बहुमूल्य नये जीवनके निर्माणसे है। यह सिद्धान्त विकृत भोगतृप्तिको और अुससे कुछ कम अंशमें विवाहसे अमर्यादित स्वेच्छाचारपूर्ण भोगतृप्तिको निषिद्ध ठहराता है। भोगेच्छाकी तृप्तिको अुसके कुदरती परिणामसे विच्छिन्न कर दिया जाय, तो घृणित स्वेच्छाचारके लिअे और अप्राकृतिक पापके लिअे नहीं तो अुसकी अुपेक्षाके लिअे तो रास्ता खुल ही जाता है।

हरिजन, ३–१०–'३६

१५

वीर्यशक्तिकी रक्षा

सारी शक्ति अुस वीर्यशक्तिकी रक्षा और अूर्ध्वगतिसे प्राप्त होती है, जिससे कि जीवनका निर्माण होता है। अगर अिस वीर्यशक्तिको नष्ट होने देनेके बजाय अिसका संचय किया जाय, तो यह सर्वोत्तम सृजन-शक्तिके रूपमें परिणत हो जाती है। बुरे या अस्तव्यस्त, अव्यवस्थित, अवांछनीय विचारोंसे भी अिस शक्तिका बराबर और अज्ञात रूपसे भी क्षय होता रहता है। और चूंकि विचार ही सारी वाणी और क्रियाओंका मूल होता है, अिसलिअे वे भी अिसीका अनुसरण करती हैं। अिसीलिअे पूर्णतः नियंत्रित विचार खुद ही सर्वोच्च प्रकारकी शक्ति है और स्वयं-क्रियाशील बन सकता है। मूक रूपमें की जानेवाली हार्दिक प्रार्थनाका मुझे तो यही अर्थ मालूम पड़ता है। यदि मनुष्य ओीश्वरकी प्रतिमूर्ति है, तो अुसे अपने मर्यादित क्षेत्रके भीतर किसी वस्तुकी अिच्छा भर करनेकी देर है, और वह वस्तु हो जाती है। जिस तरह चूनेवाले नलमें भाफ रखनेसे कोअी शक्ति पैदा नहीं होती, अुसी प्रकार जो अपनी शक्तिका किसी भी रूपमें क्षय होने देता है, अुसमें अिस शक्तिका होना असम्भव है। प्रजोत्पत्तिके निश्चित अुद्देश्यसे न किया जानेवाला काम-सम्बन्ध अिस शक्तिक्षयका अेक बहुत बड़ा नमूना है, अिसलिअे अुसकी खास तौरसे जो निन्दा की गअी है वह ठीक ही है। लेकिन जिसे अहिंसात्मक कार्यके लिअे मनुष्य-जातिके विशाल समूहोंको संगठित करना है, अुसे तो अिन्द्रियोंके जिस पूर्ण निग्रहका मैंने अूपर वर्णन किया है, अुसको प्रयत्नपूर्वक प्राप्त करना ही चाहिये।

ओीश्वरकी कृपाके बगैर यह संपूर्ण अिंद्रिय-निग्रह सम्भव नहीं है। गीताके दूसरे अध्यायमें अेक श्लोक है: "विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः, रसवर्जं रसोप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।" अर्थात्, जब तक अपवास

किये जाते हैं, तब तक अिन्द्रियां विषयोंकी ओर नहीं दौड़तीं; पर अकेले अुपवाससे रस सूख नहीं जाते। अुपवास छोड़ते ही वे और भी बढ़ सकते हैं। अिसको वशमें करनेके लिअे तो अीश्वरका प्रसाद आवश्यक है। यह नियमन यांत्रिक या अस्थायी नहीं है। अेक बार प्राप्त हो जानेके बाद यह कभी नष्ट नहीं होता। अुस हालतमें वीर्यशक्ति अिस तरह सुरक्षित रहती है कि अगणित रास्तोंमें से किसीमें होकर अुसके निकलनेकी संभावना ही नहीं रहती।

हरिजनसेवक, २३–७–'३८

१६

मनुष्यकी संयमकी क्षमता

सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधनोंकी हिमायत करनेवालोंसे मेरा झगड़ा यह है कि वे यह मानकर चलते हैं कि सामान्य मनुष्य संयमका पालन नहीं कर सकते। अुनमें से कुछ तो यहां तक कहते हैं कि अितना संयम वे कर सकते हों तो भी अुन्हें अैसा नहीं करना चाहिये। मैं अुनसे, वे अपने-अपने क्षेत्रमें कितना ही अुच्च स्थान क्यों न रखते हों, अत्यंत नम्रतापूर्वक किन्तु सम्पूर्ण विश्वासके साथ कहता हूं कि वे संयमकी संभावनाओंका कोअी अनुभव रखे बिना बोलते हैं। अुन्हें आत्माकी कार्य-क्षमताको अिस तरह मर्यादित करनेका कोअी अधिकार नहीं है। अैसे मामलोंमें मेरे जैसे अेक ही व्यक्तिका प्रमाण, यदि वह विश्वसनीय हो तो, ज्यादा कीमती है और मैं तो कहूंगा कि निर्णायक है। लोग मुझे 'महात्मा' मानते हैं अिसलिअे मेरे प्रमाणको निरुपयोगी कहकर रद्द कर देना अिस प्रश्नकी गम्भीरतापूर्वक की जा रही जांचमें अुचित नहीं कहा जा सकता।

हम अेक अैसे जमानेमें रह रहे हैं जब कि मूल्योंमें तेजीसे परिवर्तन हो रहा है। धीमी गतिसे होनेवाले परिणामोंसे हमें संतोष नहीं होता।

महज अपनी ही जातिके लोगोंके कल्याणसे, या अपने देशवासियोंके ही कल्याणसे हमें संतोष नहीं होता। हमारी सहानुभूति सारी मानव-जातिके साथ है, या हम चाहते हैं कि अैसा हो। अपने लक्ष्यकी ओर मानव-जातिकी प्रगतिमें यह सब अेक बड़े लाभका सूचक है।

लेकिन मनुष्यके दुःखोंका अिलाज धीरज खोनेसे या हरअेक पुरानी चीजको सिर्फ अिसलिअे कि वह पुरानी है छोड़ देनेसे नहीं मिलेगा। जो सपने आज हमें अुत्साहसे अनुप्राणित करते हैं अुन्हीं सपनोंको, कुछ अस्पष्टतापूर्वक ही सही, हमारे पूर्वजोंने भी देखा था। और यह मुमकिन है कि समान बुराअियोंके खिलाफ अुन्होंने जो अिलाज आजमाये थे, वे आजके अिस अपेक्षासे अधिक विस्तीर्ण हो गये क्षेत्रमें भी आजमाये जा सकते हों।

और असंदिग्ध अनुभव पर आधारित मेरी दलील यह है कि जिस तरह सत्य और अहिंसा चने हुअे थोड़ेसे लोगोंके लिअे नहीं हैं, बल्कि सारी मानव-जातिको अपने प्रतिदिनके जीवनमें अुनका आचरण करना है, अुसी तरह संयमका पालन महज अिने-गिने 'महात्माओं' के लिअे नहीं, सारी मानव-जातिके लिअे है। और जिस तरह चूंकि अधिकांश मनुष्य झूठे और हिंसक होंगे, अिसलिअे मानव-जाति अपना आदर्श नीचा कर ले यह अुचित नहीं होगा; अुसी तरह यद्यपि अनेक या अधिकांश लोग संयम-पालनकी सीख पर कान नहीं देंगे, तो भी यह अुचित नहीं होगा कि हम अपना संयम-पालनका आदर्श नीचा कर लें।

विचारार्थ पेश किया गया प्रश्न कठिन हो तो भी बुद्धिमान न्यायाधीश गलत निर्णय नहीं दे सकता। वह दर्शकोंको अैसा प्रतीत होने देगा कि अुसने अपना हृदय कठोर कर लिया है, किन्तु वह सही निर्णय ही देगा; क्योंकि वह जानता है कि सच्ची दया कानूनके अनुसार चलनेमें ही है।

नश्वर शरीरकी कमजोरियां हम शरीरमें वास करनेवाली अमर आत्मा पर आरोपित नहीं कर सकते। आत्माके अपने नियम हैं और अुनके अनुसार हमें शरीरका नियमन करना है। मेरी नम्र रायमें ये

नियम अिने-गिने परंतु अटल हैं। सारा मानव-समुदाय अुन्हें आसानीसे समझ सकता है और अुनका पालन भी कर सकता है। व्यवहारमें कोअी अुनका पालन कम करेंगे, कोअी ज्यादा, लेकिन अुन्हें बदला नहीं जा सकता। यदि हममें श्रद्धा होगी तो अपने आदर्शको सिद्ध करनेमें या अुनके पास पहुंचनेमें मानव-जातिको लाखों वर्ष भले ही लग जायं, हम अपनी श्रद्धा खोयेंगे नहीं। जवाहरलालके शब्दोंमें हमारी विचारसरणी सही और शुद्ध होनी चाहिये।

हरिजन, ३०–५–'३६

१७

चिकित्सा-विज्ञान और आत्म-संयम

वास्तविकता यह है कि डॉक्टरीके पेशेने अभी तक आत्म-संयमके विषयको अपने क्षेत्रसे बाहर माना है। परन्तु अब अुसके दृष्टिकोणमें स्वस्थ और लाभदायक परिवर्तन होनेके चिह्न दिखाओ देने लगे हैं। चिकित्सा-विज्ञानने जो लक्ष्य अपने सामने रखा है, वह है बीमारीके कारण और अिलाजकी खोज। क्योंकि ज्ञान और अन्तर्दृष्टिकी प्रगतिके साथ समाज बीमारीके केवल अिलाजसे ही सन्तुष्ट न होगा, परन्तु मूल कारणोंको मिटा कर बीमारीको रोकने पर अधिकाधिक भार देगा। जब तक लोग आत्म-संयमके प्राथमिक नियमका पालन करना नहीं सीखेंगे, तब तक बीमारीको जड़से मिटाना असंभव ही रहेगा। यह सत्य अितना स्पष्ट है कि अुसे हमें जल्दी ही स्वीकार करना पड़ेगा, और अिसकी स्वीकृतिके साथ चिकित्सा-विज्ञानको स्वस्थ जीवनके अेक आवश्यक अंगके रूपमें आत्म-संयम और आत्म-नियंत्रण पर अधिक जोर देना पड़ेगा। अहमदा-बादकी बर्थ कन्ट्रोल लीग (सन्तति-नियमन मंडल) को यह समझना चाहिये कि कृत्रिम साधनोंके ज्ञान और अुपयोगके फैलावसे केवल स्वेच्छाचारको

वुराअी ही वढ़ेगी और अुसके साथ जुड़े हुअे अनिवार्य परिणामोंके रूपमें दुःख और रोग ही समाजमें वढ़ेंगे। अिसलिअे मैं अिस लीगके संस्थापकोंको सच्चे हृदयसे यह सुझाअूंगा कि अगर वे अपने समय और शक्तिका अुपयोग केवल स्वेच्छाचारकी वुराअियोंके गहरे अध्ययनमें करेंगे और स्त्रियोंके मनमें सन्तति-नियमनके सावनके रूपमें आत्म-संयमकी आवश्यकता और स्वाभाविकताको वठा देंगे, तो वे देखेंगे कि अुन्होंने अपने लक्ष्यको सिद्ध करनेका अुत्तम और शीघ्रसे शीघ्र परिणाम लानेवाला अुपाय खोज निकाला है।

हरिजन, १२–१२–'३६

अिसमें कोअी शंका नहीं कि सन्तति-नियमनसे सम्वन्व रखनेवाले वहुतसे सुधारक लोक-कल्याणके हेतुसे ही कृत्रिम सावनोंके अुपयोगके पक्षमें अितना तूफानी आन्दोलन चला रहे हैं। परन्तु मैं अुनसे प्रार्थना करता हूं कि वे अिस वात पर गहराअीसे विचार करें कि अनुचित स्थान पर अपनी लोक-कल्याणकी भावनाका अुपयोग करनेके कैसे भयंकर और सर्वनाशी परिणाम आयेंगे। वे जिन लोगोंके पास पहुंचना चाहते हैं, वे लोग काफी संख्यामें कभी अिन कृत्रिम साधनोंका अुपयोग नहीं करेंगे। जिन्हें अिनका अुपयोग नहीं करना चाहिये, वे वेशक अिनका अुपयोग करेंगे और अपनी तथा अपनी संगिनियोंकी वरवादी न्योतेंगे। अिसकी मुझे विलकुल परवाह नहीं होगी, अगर यह निर्विवाद रूपमें सिद्ध कर दिया जाय कि कृत्रिम साधनोंका अुपयोग शारीरिक स्वास्थ्यकी और नीतिकी दृष्टिसे सही है।

हरिजन, १२–९–'३६

१८

काम-विज्ञानकी शिक्षा

काम-विज्ञानकी शिक्षाका हमारी शिक्षा-प्रणालीमें क्या स्थान है, या अुसका कोअी स्थान है भी या नहीं? काम-विज्ञान दो प्रकारका होता है। अेक वह जो काम-विकारको काबूमें रखने या जीतनेके काम आता है और दूसरा वह जो अुसे अुत्तेजन और पोषण देनेके काम आता है। पहले प्रकारके विज्ञानकी शिक्षा बालशिक्षाका अुतना ही आवश्यक अंग है, जितनी दूसरे प्रकारकी शिक्षा हानिकारक और खतरनाक है और अिस-लिअे दूर रहनेके योग्य है। सभी बड़े धर्मोंने कामको मनुष्यका घोर शत्रु माना है और वह ठीक ही माना है। क्रोध या द्वेषका स्थान दूसरा ही रखा गया है। गीताके अनुसार क्रोध कामकी सन्तान है। बेशक गीताने काम शब्दका प्रयोग अिच्छामात्रके व्यापक अर्थमें किया है। परन्तु जिस संकुचित अर्थमें वह यहां अिस्तेमाल किया गया है अुसमें भी यह बात लागू होती है।

परन्तु फिर भी अिस प्रश्नका कि छोटी अुम्रके विद्यार्थियोंको जननेंद्रियके कार्य और अुपयोगके बारेमें ज्ञान देना वांछनीय है या नहीं, अुत्तर देना रह ही जाता है। मेरे खयालसे अेक हद तक अिस प्रकारका ज्ञान देना जरूरी है। अभी तो वे जैसे-तैसे अिधर-अुधरसे यह ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। नतीजा यह होता है कि पथभ्रष्ट होकर वे कुछ बुरी आदतें सीख लेते हैं। हम काम-विकार पर अुनकी ओरसे आंखें बन्द कर लेनेसे ठीक तरह नियंत्रण प्राप्त नहीं कर सकते। अिसलिअे मैं दृढ़-पूर्वक अिस पक्षमें हूं कि नौजवान लड़के-लड़कियोंको अुनकी जननेंद्रियोंका महत्त्व और अुचित अुपयोग सिखाया जाय। और अपने ढंगसे मैंने अुन अल्पायु बालक-बालिकाओंको, जिनकी तालीमकी जिम्मेदारी मुझ पर थी, यह ज्ञान देनेकी कोशिश की है।

जिस काम-शिक्षाके पक्षमें मैं हूं अुसका लक्ष्य यही होना चाहिये कि अिस विकार पर विजय प्राप्त की जाय और अुसका सदुपयोग हो।

असी शिक्षाका अपने-आप यह अुपयोग होना चाहिये कि वह बच्चोंके दिलोंमें अिन्सान और हैवानके बीचका फर्क अच्छी तरह बैठा दे और अुन्हें यह अच्छी तरह समझा दे कि हृदय और मस्तिष्क दोनोंकी शक्तियोंसे विभूषित होना मनुष्यका विशेष अधिकार है। वह जितना विचारशील प्राणी है अुतना ही भावनाशील भी है — जैसा कि मनुष्य शब्दके धात्वर्थसे प्रगट होता है — और अिसलिअे ज्ञानहीन प्राकृतिक अिच्छाओं पर बुद्धिका प्रभुत्व छोड़ देना मानव-सम्पत्तिको छोड़ देना है। मनुष्यमें बुद्धि भावनाको जाग्रत करती और अुसे रास्ता दिखाती है। पशुमें आत्मा सुषुप्त रहती है। हृदयको जाग्रत करनेका अर्थ सोअी हुअी आत्माको जाग्रत करना है, बुद्धिको जाग्रत करना है और बुराअी-भलाअीका विवेक पैदा करना है।

यह सच्चा काम-विज्ञान कौन सिखाये? स्पष्ट है कि वही सिखाये जिसने अपने विकारों पर प्रभुत्व पा लिया है। ज्योतिष और अन्य विज्ञान सिखानेके लिअे हम अैसे शिक्षक रखते हैं, जिन्होंने अिन विषयोंकी तालीम पाअी है और जो अपनी कलामें प्रवीण हैं। अिसी तरह हमें काम-विज्ञान अर्थात् काम-विकारको काबूमें रखनेका विज्ञान सिखानेके लिअे अैसे ही लोगोंको शिक्षक बनाना चाहिये, जिन्होंने अिसका अध्ययन किया है और अिन्द्रियों पर प्रभुत्व प्राप्त कर लिया है। अूंचे दर्जेका भाषण भी, यदि अुसके पीछे हृदयकी सचाअी और अनुभव नहीं है, निष्क्रिय और निर्जीव होगा और वह मनुष्योंके हृदयोंमें घुसकर अुन्हें जगा नहीं सकेगा, जब कि आत्म-दर्शन और सच्चे अनुभवसे निकलनेवाली वाणी सदा सफल होती है।

आज तो हमारे सारे वातावरणका — हमारे पढ़ने, हमारे सोचने और हमारे सामाजिक व्यवहारका — आम हेतु कामेच्छाकी पूर्ति करना होता है। अिस जालको तोड़कर निकलना आसान काम नहीं है। परन्तु यह हमारे अुच्चतम प्रयत्नके योग्य कार्य है। यदि व्यावहारिक अनुभववाले मुट्ठीभर शिक्षक भी अैसे हों, जो आत्म-संयमके आदर्शको मनुष्यका सर्वोच्च

कर्तव्य मानते हों और अपने कार्यमें सच्चे और अमिट विश्वाससे अनुप्राणित हों, तो अुनके परिश्रमसे . . . बालकोंका मार्ग प्रकाशमान हो जायगा, वे भोलेभाले लोगोंको आत्म-पतनके कीचड़में फंसनेसे बचा लेंगे, और जो पहले ही फंस गये हैं अुनका अुद्धार कर देंगे।

हरिजन, २१-११-'३६

१९

'नैतिक दिवालियेपनकी ओर'

[श्री पॉल ब्यूरोकी पुस्तक 'टुवर्ड्स मॉरल बेन्करप्टसी' की समालोचना करते हुअे लेखकके विचारोंका संक्षिप्त विवरण देनेके बाद गांधीजीने अिस प्रकार लिखा है:]

हमारे यहां सन्तति-नियमनके साधनोंका अुपयोग सार्वत्रिक नहीं है। शिक्षित वर्गोंमें भी अुनका प्रचार मुश्किलसे ही हो पाया है। अिसलिअे भारतमें अैसी अेक भी परिस्थिति नहीं है, जिसके आधार पर यहां अिनके अुपयोगका बचाव किया जा सके। क्या हमारे देशमें मध्यम-वर्गके लोग अतिशय बालकोंसे घबरा अुठे हैं? कोअी छुटपुट अुदाहरण लेकर आप यह सिद्ध कर ही नहीं सकते कि मध्यम-वर्गमें बालकोंकी अुत्पत्ति अतिशय बढ़ गअी है। भारतमें तो मैंने विधवाओं और बाल-वधुओंके लिअे सन्तति-नियमनके अिन कृत्रिम साधनोंके अुपयोगकी हिमायत करते लोगोंको देखा है। अिसका अर्थ यह हुआ कि अिन साधनोंके हिमायती विधवाओंके सम्बन्धमें नाजायज प्रजोत्पत्तिको रोकना चाहते हैं; गुप्त व्यभिचारको नहीं रोकना चाहते। और बालवधुओंके बारेमें अुन्हें यह डर है कि वे कोमल वयमें सगर्भा हो जायंगी; अुन पर पतियोंका बलात्कार होनेका अुन्हें कोअी डर नहीं है। अिसके बाद कमजोर और निर्वीर्य नौजवानोंका नम्बर आता है, जिन्हें अपनी पत्नियों या दूसरोंकी पत्नियोंके साथ स्वेच्छाचार तो जारी रखना है, परन्तु जिसे वे पाप

समझते हैं अुस पापके परिणामोंसे बचना है। मैं साहसके साथ यह कहूंगा कि संभोगकी अिच्छा रखते हुअे भी सन्तान अुत्पन्न करनेके भारसे बच निकलना चाहनेवाले संपूर्ण हृष्ट-पुष्ट स्त्री-पुरुष भारतकी जनसंख्याके अिस महासागरमें बूंदोंके जितने ही होंगे। अिन मुट्ठीभर लोगोंको अपना अदाहरण लेकर अेक अैसी दूषित चीजका बचाव और हिमायत नहीं करनी चाहिये, जिसका अगर भारतमें प्रचार हो तो देशके नौजवानोंका सर्वनाश हुअे बिना न रहे। अत्यन्त कृत्रिम शिक्षाकी वजहसे देशके नौजवानोंकी शारीरिक और मानसिक शक्तिका नाश हो गया है। हममें से बहुतेरे लोग बाल-विवाहकी अुपज हैं। स्वास्थ्य और स्वच्छताके नियमोंकी अवगणना करनेके कारण हमारे शरीर क्षीण और कमजोर हो गये हैं। हमारी दूषित और अपूर्ण खराक और अुसमें मिलाये जानेवाले शक्तिनाशक मसालोंसे हमारी पाचन-शक्ति बिलकुल नष्ट हो गअी है। आज हमें सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधनोंके अुपयोगकी और पाशविक वृत्तिकी निरंकुश तृप्तिकी तालीमकी जरूरत नहीं है, बल्कि पाशविक वृत्तिको मर्यादित करने तथा अमुक मनुष्योंको सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य पालनेकी तालीम देनेकी जरूरत है। अुपदेश और प्रत्यक्ष अुदाहरण द्वारा आज हमें यह सिखानेकी जरूरत है कि यदि हमें अपने तन और मनको निर्बल न रखना हो, तो सम्पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन संभव और अत्यन्त आवश्यक है। आज पुकार-पुकार कर यह कहनेकी जरूरत है कि यदि हमें बौनोंकी प्रजा न रहना हो, तो रोज-ब-रोज वीर्यका नाश करनेके बदले अुसका संग्रह करना चाहिये और अुसमें वृद्धि करनी चाहिये। हमारी जवान विधवा बहनोंसे हमें कहना चाहिये कि तुम गुप्त पापाचार करनेके बदले हिम्मतसे आगे आकर फिरसे विवाह करनेकी मांग करो; नौजवान विधुरोंको पुनर्लग्न करनेका जितना अधिकार है, अतना ही तुम्हें भी अधिकार है। लोकमतको हमें अिस हद तक शिक्षित बना देना चाहिये कि बाल-विवाह समाजमें असंभव हो जायें। आज सर्वत्र जो अव्यवस्थितता, कठिन और सतत काम करनेकी अरुचि, सख्त मेहनत करनेकी शारीरिक अशक्ति, बड़े अुत्साहसे आरंभ

किये हुअे कार्योंका बीचमें ही अन्त और मौलिकताका सर्वथा अभाव दिखाअी देता है, वह सब अतिशय विषय-भोगका ही परिणाम है। मैं आशा करता हूं कि नौजवान स्त्री-पुरुष यह मानकर अपने मनको नहीं फुसलावेंगे कि सन्तानोत्पत्तिके अभावमें केवल विषय-भोगसे कोअी हानि नहीं होती, कोअी कमजोरी नहीं आती। सच बात तो यह है कि सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधनोंके साथ होनेवाली विषय-भोगकी क्रिया सन्तानोत्पत्तिकी जिम्मेदारीके भानके साथ होनेवाली अैसी क्रियासे कहीं अधिक हमारी शक्तिका ह्रास करती है।

'मन अेव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।'

अगर हम अपने मनको अिस तरह समझाने लगेंगे कि विषय-तृप्ति आवश्यक वस्तु है, अुससे कोअी हानि नहीं होती और वह पाप नहीं है, तो हम जरूर विषयेन्द्रियकी लगामको ढीली कर देंगे और फिर अुस पर नियंत्रण रखनेमें असमर्थ ही रहेंगे। अिसके विपरीत, यदि हम अपने मनको अिस तरह मनाना सीखें कि अैसी विषय-तृप्ति हानिकारक है, पापमय है, अनावश्यक है और अंकुशमें रखी जा सकती है, तो हम समझ जायंगे कि आत्म-संयम बिल्कुल साध्य वस्तु है। नवीन सत्यके और तथाकथित मानव-स्वातंत्र्यके बहाने अुन्मत्त पश्चिम हमारे देशमें स्वेच्छाचारकी जो मदिरा भेज रहा है, अुससे हमें सो कोस दूर रहना चाहिये। अिसके विपरीत, यदि हम अपने पूर्वजोंके प्राचीन ज्ञानकी पूंजी बिल्कुल खो बैठे हों, तो पश्चिमके समझदार मनुष्योंकी अनुभव-वाणी द्वारा हमें कभी-कभी जो लाभदायक और सुखप्रद सलाह मिलती है अुसे हम सुनें तो हमारा भला होगा।

चार्ली अेण्ड्रूजने 'ओपन कोर्ट' नामक मासिकमें छपा हुआ मि० हेरका 'प्रजनन और अुत्पादन' शीर्षक लेख, जो अनेक महत्त्वपूर्ण बातोंसे भरा हुआ है, मेरे पास भेजा है। वह अत्यन्त तर्कशुद्ध शास्त्रीय निबन्ध है। अुसमें लेखक कहते हैं कि सारे शरीर दो प्रकारकी क्रिया करते हैं: "शरीरको शक्तिशाली बनानेके लिअे आन्तरिक शक्तिका अुत्पादन

तथा वंशवृद्धिके लिअे वाहरी प्रजनन। आन्तरिक शक्तिका अुत्पादन व्यक्तिके लिअे अत्यन्त आवश्यक है और अेक प्रवान कार्य है; वाहरी प्रजनन सूक्ष्म पिंडोंकी वृद्धिके कारण होता है और वह गौण वस्तु है। ... अतः जीवनका नियम यह है कि पहले आन्तरिक शक्ति अुत्पन्न करनेके लिअे सूक्ष्म पिंडोंको पुष्ट किया जाय और वादमें प्रजोत्पत्तिके लिअे। शरीर कमजोर हो तव तो आन्तरिक शक्ति अुत्पन्न करके अुसे पुष्ट करना ही प्रथम कर्तव्य हो जाता है और प्रजननको विलकुल वन्द रखना पड़ता है। अिस दृष्टिसे देखने पर यह समझमें आ जाता है कि हम व्रह्मचर्य और तपस्याके आदर्श तक कैसे पहुंचे। आन्तरिक शक्तिका अुत्पादन तो कभी वन्द रह ही नहीं सकता; और वन्द रहे तो मनुष्यकी मृत्यु हो जाय। अिस तरह विचार करनेसे यह भी समझमें आ जाता है कि मृत्यु सामान्यतः कैसे होती है।" प्रजोत्पत्तिकी क्रियाका जीवन-शास्त्रकी भाषामें वर्णन करके लेखक कहते हैं: "सभ्य लोगोंमें विषय-भोग प्रजोत्पत्तिके लिअे आवश्यक हो अुससे कहीं अधिक मात्रामें चलता है, और आन्तरिक शक्तिके अुत्पादनको हानि पहुंचा कर चलता है; अिसका परिणाम रोग, मृत्यु और दूसरी अनेक वुराअियोंमें आता है।"

हिन्दू दर्शनका क-ख-ग भी जाननेवालेको मि० हेरके निवन्धका नीचेका पैरा समझनेमें कठिनाअी नहीं होगी :

"प्रजननकी क्रिया यांत्रिक नहीं है; वह यांत्रिक हो ही नहीं सकती। सूक्ष्म जीवसृष्टिमें पिण्ड-विभाजनसे जैसी अुत्पत्ति होती है वैसी ही सजीव क्रिया वह है। अर्थात् अुसमें वुद्धि और संकल्प निहित हैं। अेक जीवमें से दूसरा जीव अुत्पन्न हो और अलग हो, यह क्रिया केवल यांत्रिक रीतिसे ही होती है अैसा मानना कल्पनाके वाहर है। हां, यह वात सच है कि यह मूल क्रिया अितने अज्ञात रूपमें होती है कि अूपरसे तो अैसा ही लगता है कि अुसके पीछे मनुष्य अथवा पशुकी कोअी संकल्प-शक्ति नहीं रहती; परन्तु थोड़ा विचार करनेसे मालूम होगा कि जिस प्रकार पूर्ण विकसित मानवकी संकल्प-शक्तिसे ही अुसकी सारी हलचलें

और सारे कार्य बुद्धिके मार्गदर्शनके अनुसार चलते हैं — यह बुद्धिका कार्य ही है — अुसी प्रकार शरीर-रचनाकी प्राथमिक क्रियायें भी अमुक परिस्थितियोंकी सीमामें रहकर बुद्धिसे प्रेरित संकल्प-शक्ति द्वारा ही चलती हैं। मानसशास्त्री जिसे अज्ञात शक्ति कहते हैं। वह हमारे शरीरका अेक अंग ही है। यद्यपि हमारे सामान्य दैनिक विचारोंके साथ अुसका कोअी सम्बन्ध नहीं है, फिर भी वह अत्यन्त जाग्रत और अपना कार्य करनेमें अत्यन्त सावधान रहती है — यहां तक कि ज्ञात शक्तियां बहुत बार सुषुप्तिकी अवस्थामें पहुंच जाती हैं, जब कि यह अज्ञात शक्ति अेक क्षणके लिअे भी अपना काम बन्द नहीं करती।"

अिस अज्ञात क्रियाशक्तिको अर्थात् हमारी अधिक स्थायी शक्तिको निरंकुश विषय-सेवनसे कितना भयंकर नुकसान होता है, अिसकी हम सहज ही कल्पना कर सकते हैं। "प्रजोत्पत्तिका परिणाम मृत्युमें आता है। विषय-भोगके मूलमें ही मरणोन्मुख गति रहती है — मनुष्यके लिअे भोगमें और स्त्रीके लिअे सन्तानोत्पत्तिकी क्रियामें।" अिसलिअे लेखक कहते हैं: "लगभग अथवा सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य पालनेवाला मनुष्य वीर्यवान, प्राणवान और नीरोग रहता है।" "सूक्ष्म पिण्डोंका प्रथम कार्य आन्तरिक शक्ति अुत्पन्न करना है। यह कार्य बन्द कराकर अुनका व्यय केवल प्रजोत्पत्ति अथवा विषय-भोगमें किया जाय, तो शरीरके अवयवोंमें शक्तिका आना बन्द हो जायगा और अिसके फलस्वरूप अंतमें धीरे-धीरे अुसका नाश हो जायगा।"

अिन सब शारीरिक तथ्यों पर ही विषय-संयमके नियमोंकी नींव रची गअी है। लेखक रासायनिक अथवा यांत्रिक साधनों द्वारा सन्तति-नियमनके विरुद्ध हैं, यह आसानीसे कल्पना की जा सकती है। वे कहते हैं: "अिन साधनोंके फलस्वरूप आत्म-संयम पालनेके व्यावहारिक हेतु भी खतम हो जाते हैं, और विवाहित जीवनमें बुढ़ापेसे अशक्ति आने तक या विषय-भोगकी अिच्छाका अंत होने तक विषय-सेवन जारी रहता है। विवाहित जीवनके बाहर भी अुसका दुष्ट असर पहुंचे बिना नहीं रहता

—अिससे अनियमित तथा निरंकुश और निष्फल व्यभिचारका द्वार खुल जाता है—और अैसा व्यभिचार आधुनिक अुद्योगों, समाजशास्त्र और राजनीतिकी दृष्टिसे अतिशय भयंकर है। अितना ही कहना काफी होगा कि सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधन विवाहित दशामें अतिशय संभोगको और अुसके बाहर व्यभिचारको सरल बना देते हैं। और यदि मेरी शरीर-शास्त्रकी अूपरकी दलीलें सच हों, तो अिन साधनोंसे व्यक्ति और समाज दोनोंको अपार हानि पहुंचे विना नहीं रहेगी।"

श्री पॉल व्यूरो जिस वाक्यसे अपनी पुस्तकका अुपसंहार करते हैं, अुसे प्रत्येक भारतीय युवकको अपने हृदयमें अंकित कर लेना चाहिये :

"भविष्य पवित्र और संयमी प्रजाओंके हाथमें ही रहता है।"

नीतिनाशके मार्ग पर (गुजराती), पृ० २८–३२, १९५०

२०

अनियंत्रित विषय-भोग

विलियम आर० थर्स्टन अमेरिकाकी सेनामें अेक मेजर था। अमरीकी सेनामें अुसने लगभग दस वर्ष तक काम किया था। अिन वर्षोंमें अुसने दुनियाके अनेक भागोंमें, जिसमें चीन भी शामिल है, विविध प्रकारके अनुभव प्राप्त किये। अपने अिन प्रवासोंमें अुसने विवाहके कानूनों और रिवाजोंके समाज पर पड़नेवाले असरका अध्ययन किया, जिसके फलस्वरूप अुसे विवाह पर अेक पुस्तक लिखनेकी प्रेरणा हुअी। अिस पुस्तकका नाम 'थर्स्टन्स फिलॉसफी ऑफ मैरेज' है, जिसे पिछले वर्ष टिफनी प्रेस, न्यूयार्कने प्रकाशित किया था। वह बड़े टाअिपके केवल ३२ पृष्ठोंकी पुस्तिका है, जो अेक घंटेके अंदर पूरी पढ़ी जा सकती है। लेखक अिस विषयकी विस्तृत दलीलोंमें नहीं अुतरा है; अुसने केवल अपने निर्णय ही सामने रखे हैं, जिन्हें प्रकाशक सचमुच 'चौंकानेवाले' कहता है। अपनी प्रस्तावनामें लेखक यह दावा करता

है कि जिन निर्णयों पर वह 'व्यक्तिगत निरीक्षण, डॉक्टरोंसे प्राप्त तथ्यों, सामाजिक आरोग्य-विज्ञानके आंकड़ों तथा डॉक्टरी आंकड़ों' के आधार पर पहुंचा' है, जो अुसने युद्धकालमें अिकट्ठे किये थे। अुसके निर्णय ये हैं:

१. "कुदरतका कभी यह नियम नहीं रहा कि स्त्री अपनी रोटी और निवासके लिअे तथा सन्तान अुत्पन्न करनेके अपने कुदरती अधिकार पर अमल करनेके लिअे अेक ही पुरुषके साथ जीवनभर बंधी रहे और रोज रातको अेक ही बिस्तर पर अुसके साथ सोनेके लिअे अथवा अेक ही घरमें अुसके साथ रहनेके लिअे मजबूर हो।

२. "पुरुष और स्त्री प्रतिदिन तथा रातको अेक साथ जो रहते हैं, वह विवाहके मौजूदा नियमों और रिवाजोंका परिणाम है। यह स्थिति अनियंत्रित विषय-भोगको जन्म देती है; जिससे पुरुष और स्त्री दोनोंकी सहज बुद्धि विकृत हो जाती है, और ९० प्रतिशत विवाहित स्त्रियां आंशिक रूपमें वेश्याओं जैसा जीवन बिताती हैं। यह स्थिति अिसलिअे पैदा होती है कि विवाहित स्त्रियोंको यह विश्वास कराया जाता है कि अुनका यह वेश्यापन कानून-संमत होनेसे अुचित है और स्वाभाविक है तथा अुनके पतियोंका प्रेम कायम रखनेके लिअे आवश्यक है।"

अिसके बाद लेखक 'सतत और अनियंत्रित विषय-भोग' के परिणामोंका वर्णन करता है, जिनका सार मैं नीचे देता हूं:

(क) "अिससे स्त्रीके ज्ञानतंतु अत्यन्त निर्बल पड़ जाते हैं, वह समयसे पहले बूढ़ी हो जाती है, अुसका शरीर रोगका घर बन जाता है, वह चिड़चिड़ी, अशान्त, असन्तुष्ट रहती है तथा अपने बच्चोंकी भली-भांति सार-संभाल नहीं कर पाती।"

(ख) "गरीब वर्गोंमें अिससे बहुतेरे अनचाहे बच्चे पैदा होते हैं, जिनका पालन-पोषण असंभव हो जाता है।"

(ग) "अूंचे वर्गके लोगोंमें अनियंत्रित विषय-भोगके कारण सन्तति-नियमनके और गर्भपातके अुपाय काममें लिये जाते हैं।" "अगर सन्तति-

नियमनके तरीके सन्तानकी संख्या न बढ़ने देनेके नाम पर या और किसी नाम पर आम वर्गकी स्त्रियोंको सिखाये जायंगे, तो अुनकी प्रजा सामान्यतः रोगी, दुराचारी और भ्रष्ट होगी और अन्तमें नष्ट हो जायगी।"

(घ) "अतिशय विषय-भोग पुरुषकी वह शक्ति नष्ट कर देता है, जो अच्छी आजीविका कमानेके लिअे जरूरी होती है।" "अिस समय अमेरिकामें विधुरोंकी अपेक्षा विधवाओंकी संख्या २० लाख अधिक है। अिनमें से बहुत थोड़ी स्त्रियां युद्धके कारण विधवा हुओ होंगी।"

(ङ) "वर्तमान विवाहित स्थितिके फलस्वरूप पैदा होनेवाला अतिशय विषय-भोग पुरुष और स्त्री दोनोंके मनमें हताशा और व्यर्थताकी भावना बढ़ाता है।" "दुनियाकी मौजूदा गरीबी और बड़े शहरोंके गन्दे मोहल्ले आर्थिक दृष्टिसे लाभप्रद श्रमके अभावके परिणाम नहीं हैं, परन्तु विवाहके वर्तमान कानूनोंके फलस्वरूप बढ़नेवाले अतिशय अनियंत्रित विषय-भोगके परिणाम हैं।"

(च) "मानव-जातिके भविष्यकी दृष्टिसे सबसे गंभीर वस्तु गर्भकालमें किया जानेवाला विषय-भोग है।"

अिसके बाद चीन और हिन्दुस्तान पर लगाया गया आरोप आता है, जिसमें जानेकी जरूरत नहीं। यहां पुस्तिकाके आधे भाग तक हम पहुंच जाते हैं। बाकी आधे भागमें अिसके अुपाय बताये गये हैं।

अुपायोंसे सम्बन्ध रखनेवाली केन्द्रीय वस्तु यह है कि पति और पत्नी दोनोंको हमेशा अलग कमरोंमें रहना चाहिये, अिसलिअे दोनोंको अलग बिस्तर पर सोना चाहिये और तभी मिलना चाहिये जब दोनोंकी — खास करके पत्नीकी — सन्तानोत्पत्तिकी अिच्छा हो। लेखकने विवाहके कानूनोंमें जो परिवर्तन सुझाये हैं अुन्हें मैं यहां देनेका अिरादा नहीं रखता। अेक बात दुनिया भरमें सारे विवाहोंको समान रूपसे लागू होती है। वह है पति-पत्नीके लिअे अेक कमरा और अेक ही बिस्तर। अिसकी लेखकने अपार, और मेरे विचारसे, अुचित निन्दा की है। अिसमें कोअी शक नहीं कि पुरुष या स्त्रीके स्वभावमें पाअी जानेवाली अधिकतर काम-

वासना अिस अन्धविश्वासको प्राप्त होनेवाली धार्मिक स्वीकृतिका फल है कि विवाहित स्त्री-पुरुषोंको अेक ही कमरे और अेक ही बिस्तरका अपयोग करना चाहिये। अिसने समाजमें अैसी मनोवृत्ति अुत्पन्न कर दी है, जिसके खतरनाक असरका अन्दाज लगाना हमारे लिअे कठिन है, जो अिस अन्ध-विश्वासने पैदा किये हुअे वातावरणमें ही रहते हैं।

जैसा कि हम देख चुके हैं, लेखक सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधनोंके भी खिलाफ है।

लेखकने दूसरे जो अनेक अुपाय सुझाये हैं, अुनका मेरी रायमें हमारे लिअे कोअी व्यावहारिक अुपयोग नहीं है और अुनके लिअे कानूनकी स्वीकृति आवश्यक है। परन्तु प्रत्येक पति और पत्नी आजसे ही यह दृढ़ निश्चय कर सकते हैं कि वे रातमें कभी अेक कमरे या अेक बिस्तरका अुपयोग नहीं करेंगे और मनुष्य तथा पशु दोनोंके लिअे निर्धारित प्रजो-त्पत्तिके अेकमात्र अुदात्त हेतुके सिवा दूसरे किसी हेतुसे विषय-भोग नहीं करेंगे। पशु अिस कानूनका अनिवार्य रूपमें पालन करता है। मनुष्यको पसन्दगीकी छूट होनेसे अुसने गलत पसन्दगी करनेकी भयंकर भूल की है। प्रत्येक स्त्री कृत्रिम साधनोंसे अपना कोअी भी सम्बन्ध रखनेसे अिन-कार कर सकती है। पुरुष और स्त्री दोनोंको जानना चाहिये कि काम-वासनाकी तृप्ति न करनेका परिणाम रोगमें नहीं आता, बल्कि स्वास्थ्य और शक्तिके रूपमें आता है, बशर्ते मनुष्यका मन अुसके शरीरके साथ सहयोग करे। लेखकका यह विश्वास है कि विवाहके कानूनोंकी वर्तमान स्थिति 'दुनियाकी आजकी अधिकतर बुराअियोंके लिअे जिम्मेदार है।' मेरे सुझाये हुअे दो अंतिम निर्णयों पर पहुंचनेके लिअे यह जरूरी नहीं है कि कोअी लेखकके अिस व्यापक विश्वासको माने ही। परन्तु अिसमें कोअी शक नहीं कि अगर हम स्त्री-पुरुषके सम्बन्धोंको स्वस्थ और पवित्र दृष्टिसे देखें तथा भावी पीढ़ियोंके नैतिक कल्याणके लिअे अपनेको ट्रस्टी मानें, तो आजके बहुतसे दुःख-दर्द टल सकते हैं।

यंग अिंडिया, २७-९-'२८

अधिक जनसंख्याका हौवा

स० — अिण्डिया ऑफिस मेडिकल वोर्डके सभापति मेजर जनरल सर जॉन मैकगॉका कहना है कि "अकाल तो हिन्दुस्तानमें पड़ते ही रहेंगे। सच तो यह है कि हिन्दुस्तानके सामने अखण्ड अकाल मुंह वाये खड़ा है। अगर हिन्दुस्तानमें वढ़ती हुअी जनसंख्याको घटानेकी कोशिश न की गअी, तो अुसे जवरदस्त मुसीवतका सामना करना पड़ेगा।" क्या अिस गम्भीर सवाल पर आप अपनी राय जाहिर करेंगे?

ज० — मेरे खयालमें अकालके अैसे अुथले कारण देकर अुसका जो सच्चा और अेकमात्र कारण है, अुस परसे हमारे ध्यानको हटा दिया जाता है। मैं कअी दफा कह चुका हूं और फिर कहता हूं कि हिन्दुस्तानके अकाल कुदरतकी नाराजीसे नहीं, वल्कि सरकारी हाकिमोंकी लापरवाहीसे जाने-अनजाने पैदा होनेवाली मुसीवत हैं। अगर आदमी कोशिश करे और अक्लसे काम ले, तो अकालोंको रोकना मुश्किल नहीं है। दूसरे देशोंमें अकालको रोकनेकी अैसी कोशिशें कामयाव हुअी हैं। लेकिन हिन्दुस्तानमें अिस तरह लगातार सोच-समझकर कोअी कोशिश की ही नहीं गअी।

वढ़ती हुअी जनसंख्याका हौवा कोअी नअी चीज नहीं। अकसर यह हमारे सामने खड़ा किया गया है। जनसंख्याकी वृद्धि कोअी टालने लायक संकट नहीं; न होना चाहिये। अुसे कृत्रिम अुपायोंसे रोकना अेक महान संकट है, फिर चाहे हम अुसे जानते हों या न जानते हों। अगर कृत्रिम अुपायोंका अुपयोग आम तौर पर होने लगे, तो वह समूचे राष्ट्रको पतनकी ओर ले जायगा। खुशी अिस वातकी है कि अिसकी कोअी सम्भावना नहीं है। अेक ओर हम विषय-भोगसे पैदा होनेवाली अनचाही सन्ततिका पाप अपने सिर ओढ़ते हैं, और दूसरी तरफ अीश्वर अुस पापको मिटानेके

लिअे हमें अनाजकी तंगी, महामारी और लड़ाअीके जरिये सजा भुगतना है। अगर अिस तिहरे शापसे बचना हो, तो संयमरूपी कारगर अुपायके जरिये अनचाही सन्ततिको रोकना चाहिये। देखनेवालोंको आज भी साफ दिखाअी पड़ता है कि कृत्रिम अुपायोंके कैसे बुरे नतीजे होते हैं। नीतिकी चर्चामें पड़े बिना मैं यही कहना चाहता हूं कि कुत्ते-बिल्लियोंकी तरह होनेवाली अिस सन्तान-वृद्धिको जरूर रोकना चाहिये। लेकिन अिस बातका खयाल रखना होगा कि अैसा करनेसे अुससे ज्यादा बुरा नतीजा न निकले। अिस बढ़ती हुअी प्रजोत्पत्तिको अैसे अुपायोंसे रोकना चाहिये जिनसे जनता अूपर अुठे; यानी अिसके लिअे जनताको अुसके जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाली तालीम मिलनी चाहिये, जिससे अेक शापके मिटते ही दूसरे सब अपने आप मिट जायं। यह सोचकर कि रास्ता पहाड़ी है और अुसमें चढ़ाअियां हैं, अुससे दूर नहीं भागना चाहिये। मनुष्यकी प्रगतिका मार्ग कठिनाअियोंसे भरा पड़ा है। अुनसे डरना क्या? अुनका तो स्वागत करना चाहिये।

हरिजनसेवक, ३१-३-'४६

हमारा यह छोटासा पृथ्वी-मंडल कुछ समयका बना हुआ खिलौना नहीं है। अनगिनत युगोंसे यह अैसा ही चला आ रहा है। जनसंख्याकी वृद्धिके भारसे अुसने कभी कष्टका अनुभव नहीं किया। तब कुछ लोगोंके मनमें अेकाअेक अिस सत्यका अुदय कहांसे हो गया कि यदि सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधनोंसे जनसंख्याकी वृद्धिको रोका न गया, तो अन्न न मिलनेसे पृथ्वी-मंडलका नाश हो जायगा?

हरिजनसेवक, २०-९-'३५

वन्ध्यीकरण

लोगों पर वन्ध्यीकरण (वह क्रिया जिससे पुरुषके वीर्यमें स्थित प्रजनन-शक्तिका नाश कर दिया जाता है) का कानून लादनेको मैं अमानुषिक मानता हूं। परन्तु जो व्यक्ति पुराने रोगोंके मरीज हों, वे यदि स्वीकार

कर लें तो अुनका वन्ध्यीकरण वांछनीय होगा। वन्ध्यीकरण अेक प्रकारका कृत्रिम साधन है। यद्यपि मैं स्त्रियोंके सम्बन्धमें कृत्रिम साधनोंके अुपयोगके खिलाफ हूं, फिर भी मैं पुरुषके सम्बन्धमें स्वेच्छासे किये जानेवाले वन्ध्यीकरणके खिलाफ नहीं हूं, क्योंकि पुरुष आक्रामक है।

अमृत-बाजार पत्रिका, १२–१–'३५

२२

सन्तति-नियमनके तीन अुत्साही समर्थक

[गांधीजीके १९३५ और १९३६ के सेवाग्रामके निवास-कालमें सन्तति-नियमनके तीन अुत्साही समर्थक अुनसे मिलने आये और अुन्होंने गांधीजीको अपने मतका बनानेका प्रयत्न किया। वे थे : अिंग्लैण्डकी श्रीमती हाअु-मार्टिन, अमेरिका-निवासी अेक हिन्दू प्रचारक स्वामी योगानन्द और सन्तति-नियमन आन्दोलनकी प्रसिद्ध नेत्री श्रीमती मार्गरेट सैंगर। अुन्होंने गांधीजीके साथ जो मुलाकातें कीं, अुनकी रिपोर्टें श्री महादेव देसाअीने अुस समय 'हरिजन' में अपने साप्ताहिक पत्रोंमें छापी थीं। नीचेके भाग अुन्हीं रिपोर्टोंसे लिये गये हैं।]

श्रीमती हाअु-मार्टिन

श्रीमती हाअु-मार्टिन : "मुझे लगता है कि किसी प्रकारके संतति-निग्रहके बिना मुक्ति नहीं। आप संयमके द्वारा यह कराना चाहते हैं, और मैं दूसरी रीतिसे। मुझे आपका भी ढंग प्रिय है, पर सबको मैं यह रीति नहीं बतलाती। आप अेक सुंदर क्रियाको बहुत बीभत्स मान बैठे हैं। मैं तो कहती हूं कि जब कोअी नअी सृष्टि अुत्पन्न करनेके लिअे स्त्री और पुरुष मिलते हैं, तब वे सिरजनहारके बहुत समीप पहुंच जाते हैं। यह तो अेक दैवी वस्तु है।"

गांधीजी : "देखिये, फिर आप अपनी दलीलसे हट रही हैं। माना कि सृजन-क्रिया अेक दैवी वस्तु है, पर वह क्रिया दैवी रीतिसे करनी

चाहिये, आसुरी रीतिसे नहीं। केवल संतानोत्पत्तिके शुद्ध हेतुसे ही स्त्री और पुरुषका मिलना अिष्ट है; किन्तु जब प्रजोत्पत्तिके लिअे नहीं, बल्कि विषय-तृप्तिके लिअे वे मिलते हैं, तब तो अुनके मिलनको मैं आसुरी ही कहूंगा। मनुष्यके अन्दर दैवी संपत्ति तो है ही। पर दुर्भाग्यसे वह अिस वस्तुको भूल जाता है और पशुताको हृदयसे लगाकर वह पशुसे भी बदतर बन जाता है।"

"मगर पशुताकी यह बात अुठाकर आप बेचारे पशुकी क्यों अिस तरह निन्दा करते हैं?"

"नहीं, मैं निन्दा नहीं करता; पशु तो अपनी प्रकृतिके अनुसार चलता है। सिंहकी प्रकृति हिंसक है, वह मुझे पकड़कर निगल जाय तब भी वह अपनी प्रकृतिके विरुद्ध नहीं जाता। पर मान लीजिये कि मैं अपने हाथोंकी जगह पंजे धारण कर लूं और आपके अूपर आक्रमण कर बैठूं, तो मैं पशुताको धारण करके पशुसे भी बदतर कहा जाअूंगा न?"

"ठीक, मैं समझ गअी। मैं आपको दलीलमें नहीं हरा सकती। मेरे कहनेका मतलब तो अितना ही था कि संतति-निग्रहसे अुद्धार नहीं होता, पर शुद्ध जीवनकी ओर कुछ प्रगति तो जरूर होती है।"

"मैं आपको दलीलसे हराना नहीं चाहता। लेकिन मैं यह चाहता हूं कि आप मेरे दृष्टिकोणको ठीक-ठीक समझ लें। मनुष्यके अन्दर देव और पशु दोनों ही विद्यमान हैं। मनुष्यको पशुता सिखानेकी जरूरत नहीं पड़ती, जरूरत तो केवल दैवी अंशके सिखानेकी ही है। और जब पशुता दैवी आवरणमें लिपटी हुअी दिखाअी देती है, तब तो मनुष्यका सहज ही अधःपात हो जाता है। अगर मैं विषय-भोगको धर्म बना लूं और लोगोंसे कहूं कि भोगमें ही जीवनका सार है, तो मुझे लगता है कि लाखों-करोड़ों मनुष्य अुसी क्षण मेरा कहना मान लें — और फिर मैं तो अेक महात्मा कहलाता हूं, मेरी बात लोग क्यों न मानेंगे! मैं जानता हूं कि आप तथा मेरी स्टोप्स आदि बहनें निःस्वार्थ वृत्तिसे अुत्साहमें आकर आज जो पाप-पंथको पवित्रता और पुण्यका पंथ बतला रही हैं,

अुसमें कुछ समयके लिअे आपको कुछ अूपरी-सी विजय प्राप्त होती दिखाअी दे सकती है, पर यह याद रखिये कि अंतमें निश्चय ही आप सर्वनाशको आमंत्रण देंगी और अिसका आपको पता भी न चलेगा। पशुताकी न तो तालीम देनेकी जरूरत है, न अुसके प्रचारकी। जिसे विषय-तृप्ति करनी है वह आपके विना कहे भी करेगा; विषयके अूपर तो अंकुश रखनेकी ही शिक्षा देनेकी जरूरत रहती है।"

हरिजनसेवक, २५–१–'३५

स्वामी योगानन्द

स्वामीजीने कहा, "क्या आप संतति-निग्रहके मुकावलेमें संयमको अधिक पसन्द करते हैं?"

"मेरा यह विश्वास है कि किसी कृत्रिम रीतिसे या पश्चिममें प्रचलित मौजूदा रीतियोंसे संतति-निग्रह करना आत्मघात है। मैंने यहां जो 'आत्मघात' शब्दका प्रयोग किया है अुसका अर्थ यह नहीं है कि प्रजाका समूल नाश हो जायगा। 'आत्मघात' शब्दको मैं अिससे अूंचे अर्थमें लेता हूं। मेरा आशय यह है कि संतति-निग्रहकी ये रीतियां मनुष्यको पशुसे भी वदतर वना देती हैं; यह अनीतिका मार्ग है।"

"पर हम यह कहां तक वर्दाश्त करें कि मनुष्य अविवेकके साथ संतान पैदा करता ही चला जाय? मैं अेक अैसे आदमीको जानता हूं, जो नित्य अेक सेर दूध लेता था और अुसमें पानी मिला देता था, ताकि अुसे अपने तमाम वच्चोंको वांट सके। वच्चोंकी संख्या हर साल वढ़ती ही जाती थी। क्या अिसमें आप पाप नहीं मानते?"

"अितने वच्चे पैदा करना कि अुनका पालन-पोषण न हो सके यह पाप तो है ही, पर मैं यह मानता हूं कि अपने कर्मके फलसे छुटकारा पानेकी कोशिश करना तो अुससे भी वड़ा पाप है। अिससे तो मनुष्यत्व ही नष्ट हो जाता है।"

"तव लोगोंको यह सत्य वतलानेका सवसे अच्छा व्यावहारिक मार्ग क्या है?"

"सबसे अच्छा व्यावहारिक मार्ग यह है कि हम संयमका जीवन बितायें। अुपदेशसे आचरण अूंचा है।"

"मगर पश्चिमके लोग हमसे पूछते हैं कि तुम लोग अपनेको पश्चिमके लोगोंसे अधिक आध्यात्मिक मानते हो, फिर भी हम लोगोंके मुकाबलेमें तुम्हारे यहां बालकोंकी मृत्यु अधिक संख्यामें क्यों होती है? महात्माजी, क्या आप मानते हैं कि मनुष्य अधिक संख्यामें संतान पैदा करें?"

"मैं तो यह माननेवाला हूं कि संतान बिलकुल ही पैदा न की जाय।"

"तब तो सारी प्रजाका नाश ही हो जायगा।"

"नाश नहीं होगा, प्रजाका और भी सुन्दर रूपांतर हो जायगा। पर यह कभी होनेका नहीं, क्योंकि हमें अपने पूर्वजोंसे यह विषय-वृत्तिका अुत्तराधिकार युगोंसे मिला हुआ है। युगोंकी अिन पुरानी आदतको काबूमें लानेके लिअे बहुत बड़े प्रयत्नकी जरूरत है, तो भी वह प्रयत्न सीधा-सादा है। पूर्ण त्याग, पूर्ण ब्रह्मचर्य ही आदर्श स्थिति है। जिससे यह न हो सके वह खुशीसे विवाह कर ले, पर विवाहित जीवनमें भी वह संयमसे रहे।"

"जनसाधारणको संयममय जीवनकी बात सिखानेकी क्या आपके पास कोअी व्यावहारिक रीति है?"

"जैसा कि अेक क्षण पहले मैं कह चुका हूं, हमें पूर्ण संयमकी साधना करनी चाहिये, और जनसाधारणके बीच जाकर संयममय जीवन बिताना चाहिये। भोग-विलास छोड़कर ब्रह्मचर्यके साथ अगर कोअी मनुष्य रहे तो अुसके आचरणका प्रभाव अवश्य ही जनता पर पड़ेगा। ब्रह्मचर्य और अस्वाद-व्रतके बीच अविच्छिन्न सम्बन्ध है। जो मनुष्य ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहता है, वह अपने प्रत्येक कार्यमें संयमसे काम लेगा और सदा नम्र बनकर रहेगा।"

स्वामीजीने कहा, "मैं समझ गया। जनसाधारणको संयमके आनन्दका पता नहीं, और हमें यह चीज अुसे सिखानी है। पर मैंने पश्चिमके लोगोंकी जिस दलीलके बारेमें आपसे कहा है, अुस पर आपका क्या मत है?"

"मैं यह नहीं मानता कि हम लोगोंमें पश्चिमके लोगोंकी अपेक्षा आध्यात्मिकता अधिक है। अगर अैसा होता तो आज हमारा अितना अधःपतन न हो गया होता। किन्तु अिस बातसे कि पश्चिमके लोगोंकी अुम्र औसतन हम लोगोंकी अुम्रसे ज्यादा लम्बी होती है, यह साबित नहीं होता कि पश्चिममें आध्यात्मिकता है। जिसमें अध्यात्म वृत्ति होती है अुसकी आयु अधिक लम्बी होनी ही चाहिये यह बात नहीं है; बल्कि अुसका जीवन अधिक अच्छा, अधिक शुद्ध होना चाहिये।"

हरिजनसेवक, १३–९–'३५

श्रीमती मार्गरेट सैंगर

[जब यह प्रश्न अुठाया गया कि जो पति-पत्नी काम-विकारको रोकनेकी अिच्छा तो रखते हैं परन्तु रोक नहीं पाते, अुनके बारेमें क्या किया जाय, तब श्रीमती सैंगरने कहा: "पति-पत्नीका प्रेम अेक अैसा सम्बन्ध है जो दोनोंको मिलाकर अेकरूप कर देता है, दोनोंको पूर्ण बना देता है तथा दोनोंको अेक-दूसरेके सूक्ष्म भावोंको समझनेकी शक्ति प्रदान करता है और दोनोंके बीच अधिक आध्यात्मिक अेकरागता अुत्पन्न करता है।" अिसका अुत्तर गांधीजीने यह दिया:]

गांधीजी: "मनुष्य अपने मनको चाहे जितना धोखा दे, पर विषय विषय है और प्रेम प्रेम है। काम-रहित प्रेम मनुष्यको अूंचा अुठाता है, और काम-वासनावाला सम्बन्ध मनुष्यको नीचे गिराता है।" गांधीजीने संतानोत्पत्तिके लिअे किये हुअे धर्म्य सम्बन्धका अपवाद कर दिया। अुन्होंने दृष्टान्त देकर समझाया कि: "शरीर-निर्वाहके लिअे हम जो खाते हैं, वह अस्वाद है, आहार है; पर जो जीभको प्रसन्न करनेके लिअे खाते हैं वह आहार नहीं, अस्वाद नहीं, किन्तु स्वाद है और विहार है।

हलवा या पकवान या शराब मनुष्य भूख या प्यास बुझानेके लिअे नहीं खाता-पीता, किन्तु केवल अपनी विषय-लोलुपताके वश होकर ही अिन चीजोंको खाता-पीता है। अिसी तरह शुद्ध संतानोत्पत्तिके लिअे पति-पत्नी जब अिकट्ठे होते हैं, तब अुस सम्बन्धको प्रेम-सम्बन्ध कहते हैं, सन्तानोत्पत्तिकी अिच्छाके बिना जब वे अिकट्ठे होते हैं तो वह प्रेम नहीं, भोग है।"

श्रीमती सैंगरने कहा: "यह अुपमा ही मुझे स्वीकार्य नहीं।"

गांधीजी: "आपको यह क्यों स्वीकार्य होगी? आप तो संतानेच्छा-रहित सम्बन्धको आत्माकी भूख मानती हैं, अिसलिअे मेरी बात आपके गले क्यों अुतरेगी?"

श्री० सैंगर: "हां, मैं अुसे आत्माकी भूख मानती हूं। मुख्य बात यह है कि वह भूख किस तरह तृप्त की जाय। तृप्तिके परिणाम-स्वरूप संतान हो या न हो यह गौण बात है। अनेक बच्चे बिना अिच्छाके ही अुत्पन्न होते हैं, और शुद्ध संतानोत्पत्तिके लिअे तो कौन दंपती अिकट्ठे होते होंगे? यदि शुद्ध संतानोत्पत्तिके लिअे ही अिकट्ठे हों, तो पति-पत्नीको जीवनमें तीन-चार बार ही विषयेच्छाको तृप्त करके संतोष मानना पड़े। और यह तो ठीक बात नहीं कि संतानेच्छासे जो संबंध किया जाय वह शुद्ध प्रेम है और संतानेच्छा-रहित संबंध विषय-संबंध है।"

गांधीजी: "मैं यह अनुभवकी बात कहता हूं कि मैंने अमुक संतानें होनेके बाद अपने विवाहित जीवनमें शरीर-संबंध बंद कर दिया था। संता-नेच्छाका या संतानेच्छा-रहित सभी संबंध विषय-संबंध है अैसा आप कहना चाहें तो मैं यह कबूल कर सकता हूं। मेरा तो अेक अनुभव आलोके जैसा स्पष्ट है कि मैं जब-जब शरीर-संबंध करता था, तब हमारे जीवनमें सुख अेवं शांति और विशुद्ध आनंद नहीं होता था। अेक आकर्षण जरूर था, किंतु ज्यों-ज्यों हमारे जीवनमें — मुझमें — संयम बढ़ता गया, त्यों-त्यों हमारा जीवन अधिक अुन्नत होता गया। जब तक विषयेच्छा रही, तब

तक सेवाशक्ति शून्यवत् थी। विषयेच्छा पर चोट की कि तुरंत सेवा-शक्ति अुत्पन्न हुअी। काम नष्ट हुआ और प्रेमका साम्राज्य जमा।"

* * *

गांधीजीने आगे कहा : "वतौर नीति-रक्षकके मेरा और आपका कर्तव्य तो यह है कि अिन कृत्रिम साधनोंके द्वारा संतति-निग्रहको छोड़कर अन्य अुपायोंका आयोजन करें। जीवनमें कठिन पहेलियां तो आयंगी ही, पर वे किसी मनचाहे अनुकूल साधनसे हल नहीं की जा सकतीं। अिन संतति-निग्रहके कृत्रिम साधनोंको अधर्म्य समझकर आप चलेंगी तभी आपको अन्य साधन सूझेंगे। तीन-चार वच्चे पैदा हो जानेके वाद मां-वापको अपनी विषय-वासना शांत कर देनी चाहिये, अिस प्रकारकी शिक्षा हम क्यों न दें, अिस तरहका कानून हम क्यों न वनावें? विषय-भोग खूव तो भोग लिया, चार-चार वच्चे हो जानेके वाद भोग-वासनाको अव क्यों न रोका जाय? वच्चे मर जायं और वादको जरूरत हो, तो संतान अुत्पन्न करनेकी गरजसे पति-पत्नी फिरसे अिकट्ठे हो सकते हैं। आप अैसा करेंगी तो विवाह-वंधनको आप अूंचे दरजे पर ले जायंगी।"

श्रीमती सैंगरने गांधीजीसे कहा : "पर आप कोअी अुपाय भी तो वतलाअिये। संयम मैं भी चाहती हूं, संयम मुझे अप्रिय नहीं, पर शक्य संयमका ही पालन हो सकता है न?" सत्य-शोधककी नम्रतासे गांधीजीने कहा : "निर्वल मनुष्योंके लिअे अेक अुपाय दिखाअी देता है। वह अुपाय हालमें ही अेक मित्रकी भेजी हुअी पुस्तकमें मैंने देखा है। अुसमें यह सलाह दी गअी है कि अृतुकालके वादके अमुक दिनोंको छोड़कर विषय-सेवन किया जाय। अिस तरह भी मनुष्यको महीनेमें दस-वारह दिन मिल-जाते हैं, और संतानोत्पादनसे वह वच सकता है। अिस अुपायमें वाकीके दिन तो संयम पालनेमें ही जायंगे, अिसलिअे मैं अिस अुपायको सहन कर सकता हूं।"

हरिजनसेवक, १–२–'३६

श्रीमती सैंगरकी गम्भीर भूल

[गांधीजीने बादमें श्रीमती सैंगरके विषयमें लिखते हुअे निम्नलिखित राय जाहिर की थी :]

. . . सन्तति-नियमनके साधनों या किसी तरहके अन्य कृत्रिम अुपायों द्वारा संतति-नियमन अेक गम्भीर भूल है। मैं यह बात जिम्मेदारीकी पूरी भावनासे लिखता हूं। श्रीमती मार्गरेट सैंगर और अुनके अनुयायियोंके लिअे मेरे मनमें बड़ा आदर है। अपने कार्यके लिअे अुनके प्रबल अुत्साहको देखकर मैं बहुत प्रभावित हुआ हूं। मैं जानता हूं कि अवांछित सन्तानको जन्म देने और अुनका पालन-पोषण करनेकी लाचारीके बोझसे कष्ट पानेवाली स्त्रियोंके प्रति अुन्हें बहुत सहानुभूति है। मैं यह भी जानता हूं कि कअी प्रोटेस्टेंट धर्माचार्य, वैज्ञानिक, विद्वान और डॉक्टर —जिनमें से कअी लोगोंको मैं व्यक्तिगत तौर पर जानता हूं और जिनके लिअे मेरे मनमें बड़ा आदर है—सन्तति-नियमनकी अिस पद्धतिका समर्थन करते हैं। लेकिन यदि अिस पद्धतिके अिन महान समर्थकोंसे या पाठकोंसे मैं अिस विषय पर अपना विश्वास छिपाअूं, तो मैं जिस सत्य-भगवानका पुजारी हूं अुसका द्रोही ठहरूंगा।

सन्ततिका नियमन अवश्य होना चाहिये, अिस विषयमें मेरे और कृत्रिम साधनोंके समर्थकोंमें कोअी मतभेद नहीं है। दोनों ही पक्ष यह चाहते हैं। संयमके द्वारा संतति-नियमनकी कठिनाअीसे भी अिनकार नहीं किया जा सकता। लेकिन यदि मानव-जाति अपने लिअे अुस अुज्ज्वल भविष्यका निर्माण करना चाहती है जिसकी वह अधिकारिणी है, तो अिस लक्ष्यकी सिद्धिका कोअी दूसरा अुपाय नहीं है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि कृत्रिम साधनोंके अुपयोगका व्यापक प्रचार हुआ और सन्तति-नियमनकी यह पद्धति ही मानव-जातिने अपना ली, तो अुसका नैतिक पतन अनिवार्य है। और यह मैं अुन प्रतिकूल प्रमाणोंके बावजूद भी कहता हूं, जो अिस पद्धतिके समर्थकों द्वारा अकसर पेश किये जाते हैं।

मेरा विश्वास है कि मैं वहमसे मुक्त हूं। कोअी बात महज अिसलिअे सत्य नहीं हो सकती कि वह प्राचीन है, लेकिन साथ ही यह भी सही है कि किसी चीजको महज अुसके प्राचीन होनेके कारण ही हम संदेहकी निगाहसे नहीं देख सकते। जीवनके कुछ बुनियादी सत्य अैसे हैं कि अपने जीवनमें अनका आचरण करना कितना ही कठिन क्यों न हो अुन्हें हम छोड़ नहीं सकते।

संयमके द्वारा संतति-नियमन कठिन अवश्य है। लेकिन मेरी दृष्टिमें अभी तक अैसा कोअी व्यक्ति नजर नहीं आया है, जो अुसकी सफलता और कृत्रिम साधनोंकी तुलनामें अुसकी श्रेष्ठतासे गम्भीरतापूर्वक अिनकार करता हो या अुसमें संदेह रखता हो।

अिसके सिवा, मेरा खयाल है कि स्त्री-पुरुष-सम्बन्धकी क्रियाके अत्यन्त मर्यादित अुपयोगके विषयमें शास्त्रोंकी आज्ञाका अर्थ पूरी तरह स्वीकार कर लिया जाय, तो संयमका पालन अुक्त क्रियाको विषयानन्दका अेक साधन समझनेकी तुलनामें कहीं ज्यादा आसान हो जाता है। प्रजोत्पत्तिकी अिन्द्रियोंका कार्य स्पष्टत: विवाहित दम्पतीके लिअे जितनी अुच्च श्रेणीकी प्रजा अुत्पन्न करना सम्भव हो अुतनी अुच्च श्रेणीकी प्रजा अुत्पन्न करना ही है। और यह सम्बन्ध तभी हो सकता है और तभी होना चाहिये, जब कि दोनों पक्ष मात्र शरीर-सम्बन्धकी नहीं, बल्कि प्रजोत्पत्तिकी अिच्छा रखते हों, जो कि अैसे सम्बन्धका फल है। अत: प्रजोत्पत्तिकी अिच्छाके अभावमें अैसे सम्बन्धकी अिच्छा अवैध मानी जानी चाहिये और रोकी जानी चाहिये।

हरिजन, १४–३–'३६